राष्ट्रीय छात्रशक्ति

वर्ष २ अंक ३ | अगस्त १९७९ | मूल्य : एक रुपया

इस अंक में .....

☆ सत्ता राजनीति के शर्मनाक खेल के, विरुद्ध व्यापक लोकशिक्षण आवश्यक

☆ उच्च शिक्षा और मानव शक्ति का उपयोग
विकासशील विश्व के लिए दिशाएं

☆ विश्वविद्यालयों की अधिक उपयोगिता कैसे

☆ परीक्षा पद्धति में सुधार

☆ इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस : लालबुझक्कड़ों के भ्रष्टाचार का कसता शिकंज

☆ भारत में विदेशी मिशनरी

☆ राजनीति और नैतिकता

☆ विज्ञान में धोखाधड़ी

☆ पाठयक्रम में भी विचारधारा की घुसपैठ

अपनी कपास का उत्पादन बढ़ाइये उसे झड़ने से बचाइये।

सैलमोन फूलों और ढोंडों को झड़ने से बचाता है उन्हे भरपूर आकार प्रदान करता है।

हो सकता है कि आप अपनी फसल की पूरी देखभाल करें लेकिन पूरा फ़ायदा न उठा पायें। फूल या ढोंढे झड़ जाते हो या कपास ज़्यादा न मिलती हो तो आपकी पूरी मेहनत व्यर्थ जाती है। और आपको नुकसान उठाना पड़ता है।

अब आप इस समस्या को सेलमोन से निपटा सकते हैं। इसका छिड़काव पौधों के लिये टानिक का काम करता है, पौषक पदार्थों की कमी पूरी करके फूल और फलों को झड़ने से बचाता है। सेलमोन फलों में बसा और विटामिन सी की मात्रा बढ़ा कर उन्हें बड़ा आकार प्रदान करता है व कपास में ढोंढों को भरापूरा व बड़ा बनाता है।

सेलमोन को सेब व आम जैसे फलों के दरख्तों पर तथा मिर्ची व अंगूर इत्यादि पर भी छिड़का जा सकता है।

१०० मि. लि. (१ एकड़ फसल के लिये पर्याप्त) की अधिकतम खुदरा कीमत केवल ७ रुपये है।

एक्सेल इण्डस्ट्रीज़ निम्नलिखित उत्पादन भी बनाते हैं: एल्फा नेफ्थलीन एसेटिक एसिड टेकिनकल, सैलमाइड (एथेलीन डाइब्रोमाइड), सेल्फॉस (एल्युमीनियम फॉस्फाइड) गोलियां, एण्डोसेल (एण्डोसल्फान) टेकिन-कल, एण्डोसेल (एण्डोसल्फान) ३५ ई.सी., एमीसान ६ (मिथोक्सी इथाइल मर्करी क्लोराइड फार्म्युलेशन), फ़िनाइल मर्करी एसिटेट, सल्फेक्स (वेटेबल सल्फर), झिंक फ़ॉस्फाइड।

एक्सेल इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड

१८४/८७ स्वामी विवेकानंद रोड,
जोगेश्वरी, बम्बई ४०० ०६०
फ़ोन : ५७२८४१ टेलेक्स : EXWIN ३३०७

Sista's-EI-347/78 Hin

शिक्षा क्षेत्र का प्रतिनिधि मासिक

राष्ट्रीय छात्रशक्ति

वर्ष : 2 अंक : 3 अगस्त 1979

सम्पादक

अरुण जेटली

सह-सम्पादक

राजकुमार शर्मा

अपील

प्रिय बन्धु

राष्ट्रीय छात्र शक्ति पत्रिका के प्रकाशन को पूरा एक वर्ष व्यतीत हो गया है। दूसरे वर्ष का तीसरा अंक आपके सामने है। कई कठिनाईयों के विद्यमान होते हुए भी हमारे पाठकों व शुभचिन्तकों का सहयोग हमें बराबर मिलता रहा है जिसके लिए हम उन सबके अभारी हैं। आप में से जो पाठक जून-जुलाई व अगस्त १९७८ में पत्रिका के सदस्य बनें थे उनका सदस्यता शुल्क समाप्त हो गया है। हम अभी तक उनको पत्रिका भेजते रहें हैं लेकिन अब उनको आगामी अंक भेज पाना संभव नहीं होगा। इसलिए उन सभी सदस्यों से अनुरोध है कि वे शीघ्र ही पत्रिका के सदस्य बने रहने के लिए आगामी वर्ष का सदस्यता शुल्क भेजें। सदस्यता शुल्क मनी आर्डर/चैक/ड्राफ्ट आदि के द्वारा छात्रशक्ति कार्यालय को भेजा जा सकता है। आपकी अपेक्षाओं को पूर्ण करने के प्रयास में हम जुटे हैं। शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका होने के फलस्वरुप बहुत सी समस्याओं का सामना हमें करना पड़ता है लेकिन बगैर किसी सरकारी व अन्य सहायता के हम शिक्षा क्षेत्र में यह प्रयास कर रहे हैं जो अपने आप में विशेष महत्त्व रखता है।

आशा है आप सबका सहयोग पूर्ववत मिलता रहेगा।

सधन्यवाद

आपका

–सम्पादक

सदस्यता शुल्क

वार्षिक : 10 रु०
त्रिवार्षिक : 25 रु०
आजीवन : 100 रु०

सम्पादकीय कार्यालय :

ई-265, नारायण, विहार,
नई दिल्ली-110028

व्यवस्थापकीय कार्यालय :

16/3676, रैगरपुरा, हरध्यानसिंह मार्ग
करोल बाग, नई दिल्ली-5

शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि
मासिक पत्रिका
राष्ट्रीय छात्र शक्ति
में
विज्ञापन देकर लाभ उठाएँ

विज्ञापन दर :
आधा पृष्ठ—300/-
पूर्ण पृष्ठ—500/-
विशेष पृष्ठ—अनुरोध पर

व्यवस्थापक

सत्ता राजनीति के शर्मनाक खेल के विरुद्ध व्यापक लोकशिक्षण आवश्यक

अ० भा० विद्यार्थी परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रो० बाल आप्टे का कार्यकर्त्ताओं को पत्र

प्रिय बंधुवर,

राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के व्यापक संदर्भ में शिक्षा क्षेत्र में एक स्वस्थ, आदर्श और प्रभावशाली छात्र आंदोलन खड़ा करनेका अपना कार्य अ० भा० वि० प० गत तीस वर्षों से कर रहा है। कार्यकर्ताओं के अथक प्रयासों के फलस्वरूप आज हम देशभर के सभी विश्वविद्यालयों में एक ताकत के रूप में खड़े हैं, रचनात्मक दृष्टिकोण, शैक्षिक परिवार के सभी घटकोंका सहभाग तथा दलगत राजनीति से ऊपर उठकर काम करनेका अपना विचार आज भी उतना ही योग्य व सार्थक है जितना तीस वर्ष पहले था।

दूसरी आजादी की लड़ाई जीतने के बाद अब दो साल बीत चुके है। कालखंड में फिर एकबार देश में अराजकता भी उत्पन्न हो गयी है। अपने अपने दल-वर्ग-विभाग-गुट-संप्रदाय-समूह के स्वार्थों के लिये समाज के सभी अंग एक दूसरे खिलाफ झगड़ा मोल लिए खड़े है ऐसा भयंकर दृश्य सामने है। शासन की अक्षमता, राष्ट्रीय दृष्टिकोण का अभाव, संकुचितता का प्रभाव और संपूर्ण समाज में व्याप्त अनुशासनहीनता और अनुत्तरदायी वातावरण इन सब का काफी बुरा असर संपूर्ण समाज जीवन के विषाक्त होने के रूप में हुआ है। यहां तक कि व्यवस्था की प्रहरी पुलिस भी संघर्ष पर उतारु हुई है। ऐसी परिस्थितियों में देश में पुनर्निर्माण का रचनात्मक वातावरण खड़ा करने का राष्ट्रीय आवहान सबके सामने है। गत दो वर्षों की अपनी नीतियों में हमने इस आहवान को स्वीकार करते हुए छात्र शक्ति को रचनात्मक कार्यक्रमों में क्रियाशील करने के साथ साथ इस शक्ति का नैतिक अंकुश समाज द्रोहियों के खिलाफ सजग रहे और स्वस्थ शैक्षिक तथा सार्वजनिक जीवन के प्रहरी की भूमिका हम निर्वाह कर सके, इसका भरसक प्रयास किया है।

केन्द्र में जनता पार्टी शासन का पतन व एक तात्कालिक गठबंधन पर आधारित नये शासन के निर्माण ने अराजकता को अस्थिरता और अश्रद्धा का बल प्रदान किया है। समाज जीवन तनावपूर्ण बना है लोकतंत्र, स्वाधीनता, नीतिवादी राजनीति ध्येयासक्त लोक सेवा आदि बोलने वालों के बारे में जनमानस में अश्रद्धा उत्पन्न हो गयी है और इन शब्दों को सत्तावादी राजनीति के परिप्रेक्ष्य में अर्थहीन समाना जा रहा है। यह एक भयंकर संकट नितीवादी, अभ्रष्ट, स्वस्थ समाज जीवन के पक्षधरों के सामने है।

इन परिस्थितियों में अपना स्वीकृत कार्य धैर्य के साथ के साथ जारी रखना यह हमारा परम कर्तव्य है हम समाज परिवर्तन का लंबा निर्माणात्मक पथ अपनाने वाले है, सत्याग्रही है, रचनात्मक कार्य की नैतिक आधारशिला पर खड़ी सामाजिक दंडशक्ति—छात्रशक्ति की यह छवि हमारे हृदय में है, अतः यह नितांत आवश्यक है कि हम अपना कार्य अधिक तेजीसे और अधिक सदृढ करते हुए आगे बढ़ते रहे।

परिवर्तित शक्तियां विभिन्न तात्कालिक प्रश्न खड़ा कर सकती है। राष्ट्रवादियों की संपूर्ण विचारधारा को परास्त करने के प्रयास हो सकते है। उनका सामना करने की तैयारियां रखनी पड़ेंगी। परंतु यह भी ध्यान में रखना होगा की आने वाले कुछ माह अस्थिरता उथलपुथल और अनिश्चितता के है। इनमें नारेबाजी और मोर्चेबाजी से काम होनेवाला नहीं। यदि राष्ट्रवादियों के सामने व्यापक संकट खड़ा किया जाता है तो उसका एक व्यापक रणनीति के आधार पर सामना करना पड़ेगा। परंतु आज की स्थितियों में, सजग रहकर अपना निर्धारित कार्यक्रम संपूर्ण बल तथा प्रभाव के साथ संपन्न करनेकी ओर ध्यान रखना आवश्यक है।

हम किसी दल के शासन से डरते नहीं और किसी दल विशेष के शासन के लालायित भी नहीं, परंतु जिस शर्मनाक तरीके से सत्ता का खेल खेला जा रहा है उसकी ओर देखते हुए देश की राजनीति और सामाजिक व्यवस्थाओं में नैतिकता व सदाचार के वातावरण के लिये व्यापक लोकशिक्षा आवश्यक है ऐसा लगता है।

जनता पार्टी के नाम पर सत्ता में पहुँचे हुए लोकप्रतिनिधि जनाकांक्षाएँ लेकर कुछ तत्वों से प्रतिबद्ध होते हुए लोकसभा में गये थे। उनमेंसे अनेकोंकी महत्वाकांक्षी, व्यक्तिवादी सत्तावादी चाह केवल राजनीति कोही नहीं अपितु संपूर्ण समाज जीवन को विषपूर्ण करती जा रही है।

नीतिवादी राजनीति और सदाचारी समाज जीवन के लिये व्यापक लोकशिक्षा आवश्यक है।

यह लोकशिक्षा ही अंततोगत्वा अनीतिमान राजनीतिज्ञों के मन से व्यापक जनाक्रोश तथा जनक्रोध का भय उत्पन्न कर सकेगी। सत्तावाद भयभीत हो और सद्विचार आश्वस्त हो इस लिए ऐसी लोकशिक्षा के विभिन्न कार्यक्रम हम जरूर हाथमें ले सकते है। दलीय राजनीति में न रहनेवाली अन्य संगठनों के साथ मिलकर भी यही समय का तकाजा है ऐसे कार्यक्रम किये जा सकते है।

समाजपरिवर्तन की परिभाषा निर्माण की है। यह अपनी मान्यता अपने रचनात्मक कार्यक्रम, छात्रशक्ति की सामाजिक दंडशक्ति के रूप में भूमिका व लोकशिक्षा का यह असाधारण दायित्व ऐसी विभिन्न जिम्मेवारियां हमें एक ही समय में निर्वाह करनी है।

आने वाले कुछ महीनों में अपनी यह बहुआयामी जिम्मेवारियां आप संतुलन न बिगड़ते हुए निभायेंगे यह विश्वास है।

आपका

बाल आप्टे

विश्वविद्यालयों की अधिक उपयोगिता कैसे

□ वी० के० आर० वी० राव

परम्परागत रूप से भारत के विश्वविद्यालय मुख्य रूप से उपलब्ध ज्ञान और नवीनतम अनुसंधानों से प्राप्त ज्ञान के प्रसार में रत हैं। इसके अतिरिक्त विश्वविद्यालय छात्रों को अतिरिक्त गतिविधियों में भाग लेने के लिए उत्साहित करते हैं। जैसे कि खेल, एन० सी० सी०, राष्ट्रीय सेवा योजना, वाद-विवाद ड्रामा इत्यादि। छात्रों को विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में दक्षता प्राप्त करवाते हैं। सिद्धांत रूप से तो विश्वविद्यालयों से यह आशा भी की जाती है कि वे छात्रों को उनके सर्वांगीण विकास के लिए प्रेरित करेंगे। कुछ समय से यह बात भी चल रही है कि उनको समाज सेवा में अपनी भूमिका निभानी चाहिए जिसमें छात्र और अध्यापक दोनों भागीदार हों।

वास्तव में तथ्य यह है कि हमारे विश्वविद्यालय अपनी परम्परागत भूमिका भी नहीं निभा पा रहे हैं। वास्तव में हमारे देश के विश्वविद्यालय छात्र आंदोलन और छात्र-असंतोष के केन्द्र बन गये हैं जिनमें छात्रों और अध्यापकों का एक बहुत बड़ा वर्ग उद्देश्य, प्रेरणा और उन्नति के विषय में निराशा अनुभव कर रहा है। साथ ही जन मानस में उच्च शिक्षा के प्रति अविश्वास की भावना घर करती जा रही है। इसलिए यह ठीक समय है जबकि हम विश्वविद्यालय की शिक्षा को पहले के मुकाबले अधिक उद्देश्यपूर्ण और अधिक फलवर्द्धक बनाएं ताकि इसमें विद्यार्थियों और शिक्षकों को दोनों को सिद्धि प्राप्त हो सके।

स्पष्ट रूप से विश्वविद्यालयों को अपने परम्परागत कार्यों की निपुणता पर ध्यान देना चाहिए। जो नया दृष्टिकोण हो उसका लक्ष्य केवल शिक्षा और अनुसंधान के क्षेत्रों में व्यावसायिक श्रेष्ठता प्राप्त करना ही बल्कि समाज सेवा के कार्यों में और उसके अधिकार क्षेत्र में आने वाले कार्यों में उसकी अच्छी पहिचान हो।

इस नये दृष्टिकोण को अपनाने के लिए मैं निम्न सुझाव दे रहा हूं।

1. विश्वविद्यालयों के विभागों और संकायों को अपनी व्यावसायिक सेवाएं कालेजों को अर्पित करनी चाहिए जहां कि व्यावसायिक सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। इसी प्रकार कालेजों द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत अपनी सेवाएं उच्चतर स्कूलों को अर्पित की जानी चाहिए। इस प्रकार व्यावसायिक स्तर पर विश्वविद्यालय और कालेज शिक्षकों के मध्य तथा कालेज और उच्चतर स्कूलों के मध्य सम्बन्धों की निरंतरता का विकास होना चाहिए।

फिर भी यह अधिक महत्वपूर्ण है कि विश्वविद्यालय की शिक्षा चरित्र निर्माण और व्यक्तित्व निर्माण की ओर केन्द्रित हो। लोगों में और विशेषकर कमजोर क्षेत्रों में विश्वविद्यालय समुदाय की अच्छी पहचान हो सके। वास्तव में विश्वविद्यालय और उनकी गतिविधियां इस प्रकार की होनी चाहिए कि पेचीदा समस्याओं किए के समाज उनसे परामर्श और मार्गदर्शन प्राप्त कर सके। जोकि इस बदलते समय में, विकास और आधुनिकता की ओर जाने के मार्ग में आड़े आती हैं।

एक धर्म निरपेक्ष राज्य में जैसा कि अपना देश है यह विश्वविद्यालय का कार्य है कि वह न केवल दी जाने वाली शिक्षा बल्कि सामाजिक मामलों और सामाजिक विकास में योगदान देकर मूल्यों की रक्षा करे। इसलिए मेरे विचार में हमारे विश्वविद्यालयों का इस प्रकार उन छात्रों के प्रशिक्षण पर जो कि विश्वविद्यालयों और उससे सम्बन्धित कालेजों के अधिकार क्षेत्र में आते हैं, हितकारी प्रभाव होगा।

2. विश्वविद्यालय और कालेज स्तर पर दी जाने वाली शिक्षा इस प्रकार हो कि उसके द्वारा मानव मात्र की प्रतिष्ठा का आदर हो, विभिन्न धर्मों और सांस्कृतिक परंपराओं के प्रति आदर उत्पन्न हो, राष्ट्रीय अस्तित्व का मान हो, गरीबों और समस्याओं के प्रति समझ उत्पन्न हो चाहे वे सांस्कृतिक सामाजिक या आर्थिक रूप से पिछड़े हों।

3. शैक्षिक कार्यक्रमों के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों को अपनी गतिविधियां समाज सेवा और ग्राम कल्याण की ओर केन्द्रित करनी चाहिए। समाज सेवा के कार्यों में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, आस-पड़ोस के झुग्गी, झोपड़ी क्षेत्रों में सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सुधार और गांवों को गोद लेकर उनका पूर्णतः सुधार इत्यादि कार्यक्रम आ सकते हैं। ग्राम-कल्याण के कार्यों में क्षेत्रीय साधनों का और जनता का रहन-सहन की परिस्थितियों का सर्वे, विकास से प्राप्त सुविधाओं के लाभ और पिछड़े वर्गों द्वारा उठाये गये वास्तविक लाभ का अध्ययन, भोजन, स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा, ग्रामीण संचार, ग्रामीण परिवहन समस्याओं, निकासी, स्वच्छता, आरोग्यता इत्यादि के अध्ययन के कार्यक्रम आ सकते हैं।

इन कार्यक्रमों को विश्वविद्यालय क्षेत्र में प्रतिष्ठा प्राप्त कराने के लिए छात्रों को प्रेरित करना चाहिए, इन कार्यक्रमों को नियमानुसार लागू करना चाहिए और यह छात्रों की योग्यता का एक हिस्सा होना चाहिए। विभिन्न विश्वविद्यालयों और कालेजों के संकायों का इन गतिविधियों में भाग लेने का कार्य व्यवस्थित रूप से शैक्षिक कार्यक्रमों का एक भाग होना चाहिए।

अगर हमारे विश्वविद्यालय यह सुझाव लागू करते हैं तो उनको न केवल नयी दृष्टि मिलेगी बल्कि जिस समाज के वे कार्य कर रहे हैं उससे अधिक सुसम्बद्ध होंगे।

—०—

विकासशील विश्व के लिए दिशाएँ

उच्च शिक्षा और मानव शक्ति का उपयोग

—एम० एस० कांथी
व
—गुस्टी रीडगल

किसी भी समाज की उच्च शिक्षा पद्धति के संचालन व प्रबन्ध का आधार निम्न दिये दो सिद्धान्तों के अनुसार किया जा सकता है :—

(क) योजना बद्ध मानव-शक्ति की जीवन विधि जिसमें कुछ सही संख्या के लोगों को अलग अलग व्यवसायों के लिए तैयार करना उद्देश्य होता है।

(ख) स्वतन्त्र चुनाव का सिद्धान्त जहाँ उद्देश्य विद्यार्थियों के चुनाव के उत्तरानुसार शिक्षा प्रदान करना होता है।

विश्व के सभी राष्ट्र इन दो सिद्धान्तों के महत्व के सम्बन्ध में अलग-अलग दृष्टिकोण रखते हैं। बहुत से समाजवादी और विकासशील राष्ट्रों में पहला अर्थात मानव शक्ति सिद्धान्त पर अधिक बल दिया जाता है जबकि दूसरे अन्य अमेरिका और दूसरे देशों में उनके इतिहास के मतानुसार स्वतन्त्र चुनाव के सिद्धान्त पर अधिक बल दिया जाता है। यूरोपियन राष्ट्रों में तो इन दोनों सिद्धान्तों के मध्यम मार्ग को प्राथमिकता दी जाती है।

अभी पिछले समय, अमेरिका में स्वतन्त्र चुनाव के सिद्धान्त की आलोचना हुई और मानव-शक्ति के सिद्धान्त की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। उच्च शिक्षा पर कई प्रकार के प्रशिक्षित विशेषतया इन्जिनियर और डाक्टरेट विशाल संख्या में पैदा करने का दोष लगाया जाता है। इस समस्या को आसान बनाने के लिए स्वतन्त्र चुनाव के सिद्धान्त ने मजदूर बाजार में खपत से अधिक लोगों को उच्च शिक्षित व कुशल व्यक्ति बनाया है। इसलिए प्रायः यह कहा जाता है कि अमेरिका और दूसरे देशों में स्वतन्त्र चुनाव के सिद्धान्त को त्यागकर मानव-शक्ति सिद्धान्त की योजना को अपनाना चाहिए और उच्च शिक्षा समाज की आवश्यतानुसार प्रदान करनी चाहिए। मुख्यतया दृष्टिकोण निम्न तथ्यों पर आधारित है :—

(क) जैसे जैसे धन बढ़ता है वैसे वैसे ही कुशल शिक्षित मानव शक्ति की भविष्य में किन्हीं तिथियों पर जरूरत पड़ेगी

(ख) इन आवश्यकताओं की भविष्यवाणी कुछ अधिक बड़े पैमाने पर की जा सकती है।

(ग) इन विशेष आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए शिक्षा को सभी स्तरों पर चलना चाहिए।

तकनीकी और आर्थिक दल का विकास भविष्य के रोजगार के अवसरों को पूरा करने की प्रक्रिया पर पूर्व नियतित माना जाता है। हालांकि शिक्षा-प्रणाली को इस विकास प्रक्रिया से तालमेल बैठाना चाहिए। इसी तरह की समानता पर आधारित एक केन्द्रित योजना बद्ध और नियंत्रित शिक्षा प्रणाली तैयार की गई है जोकि हर तरह की मानव-शक्ति को निश्चित संख्या विकास प्रक्रिया में काम आने वाली ही पैदा करेगी। इस विचारधारा में कुछ लाभ माने जा सकते हैं। परिणामस्वरूप किसी भी देश के लिए इससे व्यावसायिक और रोजगार प्रदान करने वाली शिक्षा और प्रशिक्षित लोगों के बीच कुछ सीमा तक तालमेल पैदा करने की आशा की जा सकती है। मानव-शक्ति योजना में कई प्रकार की विचार धाराएँ है, जिनमें से कुछ निम्न है :—

अनिश्चित व्यावसायिक आवश्यकताएं :

किसी भी काल में प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता किसी भी प्रकार की अर्थव्यवस्था के लिए पूर्व नियतित व निश्चित नहीं की जा सकती। अर्थव्यवस्था अलग-अलग तरह के प्रशिक्षित लोगों के समूह की मध्यम श्रेणी के साथ भी समायोजन कर सकती है। उदाहारण के लिए अगर कोई अर्थव्यवस्था कुछ निश्चित और आवश्यक संख्या के प्रशिक्षित लोगों का अभाव रखती है तो उसके लिए लोगों को तेजी से तैयार किया जा सकता है। या उन लोगों के स्थान पर मशीनों का आविष्कार किया जा सकता है। यह सच है कि अलग अलग प्रशिक्षित लोगों का महत्व उनसे सम्बन्धित मांग व पूर्ति पर निर्भर है। यद्यपि अगर कुछ निश्चित संख्या के प्रशिक्षित लोगों की कमी है जैसे फिजिशियन की नौकरी के विषय में तो उनको समाज अल्पव्ययित बना सकता है। उनके मालिकों को अच्छा वेतन दे सकता है। इस प्रकार केवल मांग द्वारा अर्थव्यवस्था में प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता पूर्व निश्चित और नियतित नहीं बनायी जा सकती जैसे युद्ध काल के अवसर पर कोई भी देश ऐसा दिखा सकता है। शान्ति काल में उन देशों द्वारा अर्थव्यस्था में दोबारा परिवर्तन किया जा सकता है। इस तथ्य से पता चलता है कि जर्मनी, ब्रिटेन, सोवियत संघ और अमेरिका जैसे अलग अलग देशों में एक दम भिन्न शैक्षिक वातावरण और व्यावसायिक कुशलता के भण्डार से ही अधिम और पूर्ण रोजगार प्रदान करने वाली औद्योगिक अर्थव्यवस्था का संचालन किया जाता है।

आर्थिक अनिश्चितता :

दूसरी अन्य लागतों की भाँति शिक्षा भी 45 वर्षों के काल की विद्या है। वर्तमान भविष्यवाद की धुन के होते हुए भी अर्थव्यवस्था की व्यापक विशेषताओं को आंकना कई दशकों से सीमा से परे माना जाता है। भविष्य के प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकताएँ अनिश्चित है। यह समय की विशेष स्थिति पर निर्भर करता है जैसे अगर अर्थव्यवस्था युद्धकाल के लिए है तो आवश्यकताएँ शान्तिकाल के लिए है तो उससे अलग आवश्यकताएँ एक देश के लिए होंगी। शान्तिकाल मे किसी भी देश को समस्याएँ होंगी जैसे घरेलू समस्याएँ-शहर का का दूषित वातावरण, बच्चों की प्राथमिक शिक्षा, निजी उपयोग की वस्तुओं का निर्माण या व्यक्तिगत सेवाओं को महत्व प्रदान करना इत्यादि। वे इस बात पर भी निर्भर करते हैं कि कहीं अदृश्य तकनीकी परिवर्तन नये व्यवसायों को बढ़ा देता है या पुराने व्यवसायों को समाप्त कर देता है और क्या देश केवल अमीर व्यक्तियों के एयाश की वस्तुओं का ही निर्माण करता है। उनके उत्पादन वे उन अमीर व्यक्तियों की सेवाओं पर ही ध्यान देता है। किसी देश की मानव शक्ति उसको कर सकने की सामर्थ्य पर निर्भर होनी चाहिए। यह उस देश की मौजूद मानव शक्ति पर निर्भर करेगी कि किस प्रकार उनको शिक्षा दी गई और कैसे उक्त विचार वे रखते हैं और उनके विचारने की शक्ति व प्रक्रिया किन कार्यों की ओर ले जाती है। व्यक्ति क्या करना चाहते है और उस देश की अर्थव्यवस्था कितने लोगों को रोजगार प्रदार कर सकती है। इस बात का मेल दो श्रेणी का है। विश्व के कई विकासशील राष्ट्रों में युवावर्ग को इन सभी के लिए तैयार नहीं नहीं किया जा सकता। यद्यपि वे देश के उस प्रभाव शाली वर्ग से होते हैं जो कि उस देश की आवश्यक कार्यों को पूरे और निश्चित करने में पूरी भूमिका अदा करते हैं। शिक्षा बदलते मूल्यमानों के लिए तालमेल करने वाली मात्रा एक अकर्मक क्रिया नहीं है नाहि यह उनकी सकर्मक कार्य चालिका है।

यांत्रिक तकनीकी बेरोजगारी :

यंत्र और बेरोजगारी से सम्बन्धित चर्चित विचार एक शताब्दी से वैसे ही हैं। आदम स्मिथ के पश्चात् के शिक्षाशास्त्रियों ने इस विचार को अपनाने का साहस किया है कि यांत्रिकता के बढ़ने से बेरोजगारी भी बढ़ेगी। परन्तु अमेरिका जैसे देश में वहाँ के राष्ट्रीय यांत्रिक व स्वचालित आयोग ने यह निष्कर्ष प्रकाशित किया कि 1950-1960 तक के मध्य की सात प्रतिशत बेरोजगारी वित्तीय कमी और मजदूर सम्बन्धी नीतियों में परिवर्तन के कारण पैदा हुई है नाकि यंत्र सम्बन्धी परिवर्तनों के कारण।

कोई भी व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि मशीनों और स्वचालितता के बढ़ने के कारण बहुत से व्यक्ति अपना रोजगार खो बैठे हैं। बहुत से व्यक्तियों के लिए यह बेरोजगारी अधिकतर उनके अपने ही व्यक्तिगत कारणों से है जो कि मानव रूप में कमी के कारण माना जाता है। आर्थिक उन्नति एक गतिशील प्रक्रिया है जहाँ प्रायः कुछ संख्या में व्यक्ति अवश्य बेरोजगार होते है क्योंकि वे नौकरियों में से अच्छी नौकरी पाने के लिए परिवर्तन के चक्कर में अधिक रहते है। अर्थशास्त्र के एक शती के इतिहास ने अधिक बेरोजगारी का कोई भी शाश्वत झुकाव प्रकट नहीं किया है जो कि तकनीकी विकास के कारण हुआ हो। असल में विकसित देशों के बेरोजगारी का इतिहास श्रवनति काल के पश्चात् पूर्व के दिनों की तुलना में अच्छा ही रहा है।

विकासशील राष्ट्रों में कार्य का विशाल भण्डार (क्षेत्र) है। जोकि पर्याप्त मानव शक्ति के अभाव पूरा करना शेष है। इसके लक्षण स्पष्ट है। बहुत से प्रशिक्षित व्यक्ति जोकि उत्पादन कार्यों में लगाये जा सकते है वस्तुतः उभरते समाजों (उन्नत समाजों) में उनकी संख्या बहुत अधिक है।

किसी भी राष्ट्र के लिए पूर्ण रोजगार की तकनीकी और राजनीतिक समस्या, मुद्रा स्फीति पर अंकुश और समतुल्यता को बनाए रखना एक असाधारण समस्या है। विशेषतया इस समय में जब बड़ी संख्या में युवा व्यक्ति मजदूर वर्ग में स्थानांतरित हो रहे हों। इसलिए विकासशील देशों में समस्या कार्य की कमी का होना नहीं है बल्कि प्रशिक्षित लोगों के ठीक उपयोग का है।

प्रस्तुत मजदूर बाजार :

यद्यपि कोई भी एक देश में शिक्षा प्रवीण व्यक्तियों की अधिकता हो सकती है परन्तु कुल मिलाकर सारे संसार में अभी भी इन्जिनियरों, डाक्टरों, उद्योगपतियों, अर्थशास्त्रियों, जीव रसायन शास्त्रियों और केमिस्टों का भारी अभाव है। एक उलटा मस्तिष्क नियमन विशेषतया विकासशील देशों की ओर निर्देशित करना एक असाधारण उत्पादन बढ़ाने वाला होगा। विकासशील राष्ट्रों की वर्तमान चलन की सबसे संकुचित बात शिक्षा को न केवल राष्ट्र के मजदूर बाजार से बांधने की है बल्कि उस राष्ट्र के भी किसी विशेष छोटे से प्रांत व क्षेत्र से जोड़ने की है। वहाँ उच्च शिक्षा पाने का लक्ष्य केवल किसी स्थानीय उद्योग में नौकरी पानी ही है। आधुनिक तकनीकी व्यवस्था ने कई राष्ट्रों में भविष्य में अधिक गतिशील रहने के लिए प्रभावित किया है। यह वैसा ही है जैसा रहना चाहिए।

व्यवसायिक महत्व :

अभावग्रस्त देशों में साधारणतया शिक्षा के बारे में यह माना जाता है कि इसका उद्देश्य लोगों को रोजगार पाने में सहायक होता है जो कि एक ठीक धारणा नहीं है। यह रंग रहित भेदभाव पूर्ण एक ठोस शिक्षा और नौकरी के बीच एक पत्राचार की धारणा पर आधारित है। यह आशा की जाती है कि कोई अगर लुहार के रूप में अप्रेंटिस हो तो वह हमेशा लुहार ही बना रहेगा, "फार्मेसी का एक विद्यार्थी फार्मेसिस्ट ही बनेगा, इतिहास के पी० एच० डी० व्यक्ति को किसी कालेज में इतिहास को पढ़ाना होगा। इनमें किसी भी तरह का बदलाव उसकी शिक्षा की असफलता या स्वयं विद्यार्थी की असफलता मानी जाती है। विकासशील देशों द्वारा इस तथ्य पर

महत्वता देने के कारण कई अन्य निष्कर्षों को नकारा गया है। शिक्षा का कार्य जिसमें विशेष व्यवसायिक शिक्षा भी शामिल है किसी को न केवल स्कालरशीप के लिए तैयार करना है बल्कि एक व्यक्तिगत दृष्टिकोण भी बनाना है जोकि उत्पादन योग्यता की समर्थता की ओर ले जायेगा। एक युवा जिसने अपने को पत्रकार के रूप में शिक्षित किया है वह अपनी योग्यता को किसी भी उद्योग या प्रबन्धकीय कार्य के लिए या प्रभावशाली गतिशील नेता के लिए उपयोग में ला सकता है। एक कानून का छात्र अपनी शिक्षा को किसी कैमिकल उत्पादन में कोई कार्यकारी हैसीयत पर रह सकता है। एक दर्शन शास्त्र का पी०एच०डी० अपना भविष्य राजनीति में, विदेश मंत्रालय में छापे खाने में या कहीं किसी कालेज में कोई कार्य प्राप्त कर बना सकता है। इस प्रकार व्यावसायिक शिक्षा एक आवश्यक असंगतता नहीं है अगर इसको इतने संकुचित दायरे में न रक्खा जाए।

एक ही समस्या की अनेकता के लिए नई सम्भव पहुँचों से विभिन्न चारित्रिक पृष्ठिभूमि रखते हुए नौकरी के बाजार में नौकरी ना लेना एक अद्भुत निकट दृष्टि है। यह असमर्थता का लक्षण नहीं है बल्कि उस शिक्षा की विभिन्नता है। यहां तक एक सूक्ष्म व्यवसायिक दृष्टिकोण भी अपना एक निश्चित प्रभाव रखती है और अधिक मौलिक मजदूर शक्ति पैदा करती है।

शिक्षा और खाली समय :

यह उस समाज के अनुकूल माना जा सकता है जो एयाशी के अनावश्यक उत्पादन से छुटकारा प्राप्त करता है। औद्योगिक समाजों में बहुत से व्यक्ति इस बात की आलोचना कर रहे है कि अमीर लोगों ने अपने हितों के लिए कुछ सामाजिक मूल्यमान बनाये हैं। कुछ व्यक्ति जीवन के साधनों के अपनाने के बिखराव से कम मान रहे हैं। वे ही व्यक्ति यद्यपि समाज की अधिक मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने और एक अच्छा जीवन स्तर प्रदान करने के लिए कहते हैं। वायु जो सांस लेते हैं और सांस्कृतिक मूल्य को अपनाने का उद्देश्य पूरा करतेहुए कोई भी कार्य कर सकते हैं। जबकि उनकी मानवीय पुकार बीसवीं शती के अंत तक अधिक मुखरित हो सकती है। यह स्पष्ट है उस समय एयाश साधनों का वातावरण नहीं बढ़ेगा परन्तु सारा मिलाकर समाज का स्तर ऊँचा होगा।

अंतिम विश्लेषण में जीवन ऊंचे अर्थों से चालित होगा परन्तु एयाश के क्षण कम होंगे। एक मशीन प्रधान समाज में एक तरफ तो सुविधायें दी जाती हैं दूसरी ओर उनकी आवश्यकताएं और भी बढ़ जाती हैं। भविष्य के लिए सुविधाएँ, अपने हक का ध्यान और अन्य कई प्रकार के पेचीदे कार्यों को पूरा करते, समय को बरबाद करने वाली क्रियाएँ बढ़ती है जो कि बीसवीं शती की मुख्य विशेषताएँ मानी जाती है।

शिक्षा एक नमूना नहीं है जोकि केवल लोगों को कोई भी कार्य करने के लिए तैयार बनाने का साधन हो। न यह पूर्व निर्धारित तकनीकी व्यवस्था है। नहि यह लोगों को तकनीकी व्यवस्था को निर्देश करने के लिए ही शिक्षित करना जोकि मानवीय रचनात्मक कार्यों की ओर जाने का मार्ग हो। विकासशील राष्ट्रों को अपने देश के लोगों की गरीबी पर स्पष्टतया विजय पानी चाहिए, जातीय न्याय प्रदान करना चाहिए, शहरों को नया रूप देना चाहिए और वातावरण साफ बनाना चाहिए, कानून व व्यवस्था को बनाए रखना चाहिए, लोगों के स्वास्थ्य को सुधारना चाहिए और सभी को शिक्षा देनी चाहिए, कला का विकास करना चाहिए, शांति व्यवस्था को बनाए रखना और जनसंख्या पर काबू पाना चाहिए। इन सब कार्यों को पूरा करने के लिए अत्यन्त समर्पित व्यक्तियों की आवश्यकता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए समाज के शिक्षित, कोमल हृदय और सूक्ष्म ग्राही व्यक्तियों को पूरे बल से कार्य करना होगा। उच्च शिक्षा की सीमाओं पर किन्हीं साधनों द्वारा नहीं पहुचा जा सकता। शिक्षा ही तृतीय विश्व के लिए एक ऐसी मुख्य आशा है जिसके द्वारा अपनी समस्याओं से जूझा जा सकता है।

कुछ अर्थशास्त्रियों के विचार में और समाज वैज्ञानिकों की यह धारणा है कि उच्च शिक्षा ने किसी भी अर्थ विकास में शारीरिक पूंजी संचय का मुख्य स्थान ले लिया है। निम्न आय वाले देशों में विकासशील योजनाकारों के पास बाधा के रूप में बचत की की तुलना के अतिरिक्त प्रशिक्षित लोगों का न होना और ज्ञान की कमी अधिक है। यह स्वागत निर्णय माना जा सकता है कि वे देश विकास के लिए मशीनी दृष्टिकोण का सहारा कम ले रहे है। वे लोगों के गुण सम्बन्धी पहलुओं की महत्वता की सराहना शुरू कर रहे हैं विशेषताओं की सराहना विकासशील देशों में शिक्षा के लिए उत्साह का विषय केवल धन कमाना ही नहीं है। यह उनकी स्वतन्त्र प्रियता का चिन्ह है और शताब्दियों से पिछड़ेपन और मूर्खता से मुक्ति का संकेत है। उदाहरण के लिए मलेशिया नामक देश ने अपने देश के सभी प्राप्त स्रोतों को अपने लोगों को शिक्षा प्रदान करने में लगा दिया न कि अपने देश की रक्षा सम्बन्धित कार्यों में लगाया। साधारणतया शिक्षा पर अधिक बल की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक कारणों से विशेष प्रशंसा की गई है।

मानव शक्ति योजना के पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है। जैसे हाल मार्शट ने मजदूर बाजार की मांग व पूर्ति पर साथ-साथ जोर दिया है। मानव शक्ति योजना में विकासशील देश का सबसे कठिन निर्णय प्राप्त सीमित साधनों की आय जनता की शिक्षा प्रदान करने में न लगाकर कुछ विशेष व्यक्तियों को विशेष शिक्षा देने का है। गतिशील समर्थ अधिकारी और व्यवसायिक नेता तैयार करने के लिए यह अच्छा हो सकता है कि कुछ थोड़े संख्या के लोगों की शिक्षा पर ध्यान केन्द्रित किया जाए ताकि आम जनता के स्तर पर जो कि साधारण कुशल और अकल्पनात्मक योजना के विद्यार्थी हो सकते है। अब तक इस विषय के बारे में पक्का निर्णय विकासशील देशों के न तो शिक्षाविद् ले रहे है और न ही अर्थशास्त्रियों द्वारा ही लिया जा रहा है।

(प्रस्तुत लेख मूल रूप से अंग्रेजी से अनुवाद किया गया है। लेख में उल्लिखित विचार लेखकों के निजी विचार हैं। सम्पादकीय सहमति अनिवार्य हो यह आवश्यक नहीं है। इस लेख का हिन्दी में अनुवाद श्री नरेन्द्र मोहन वशिष्ठ ने किया है।)

— सम्पादक

अल्पसंख्य बंधु राष्ट्र का अहित करने से स्वयं को बचावें

नागपुर में गत जुलाई माह में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की अखिल भारतीय कार्यकारी मंडल की बैठक गत तीन माह के कार्य का सिंहावलोकन करने के लिए तथा आगामी कार्यक्रमों को निश्चित करने के लिए संघ के सर कार्यवाह माननीय राजेन्द्रसिंह की अध्यक्षता में रेशीमबाग स्थित डा. हेडगेवार स्मृति भवन में हुई। बैठक में सरसंघचालक प. पू. बालासाहब भी उपस्थित थे।

कार्यकारी मंडल के सभी पदाधिकारी तथा निम्न प्रमुख माननीय सदस्य बैठक में उपस्थित रहे।

माननीय श्री लाला हंसराजजी, दिल्ली, माननीय श्री बाबू दिलीपचंदजी, चंडीगढ़, बैरिस्टर नरेन्द्रजीतसिंहजी, कानपुर, डा. रामेश्वरदयाल पुरंग, मैनपुरी, डा. कृ. रा. कुलकर्णी, गजेन्द्रगड, श्री नारायणराव टिकरे, धारवाड़, श्री रंगस्वामी थेवर, मद्रास, श्री प्रल्हादपंत अभ्यंकर, औरंगाबाद, मान. श्री आप्पाजी जोशी, वर्धा, श्री भगवानदासजी गुप्ता, चिखली, मान. श्री मा. ना. घटाटे, नागपुर, श्री बा. ना. बन्हाडपांडे, नागपुर, डा. प्रा. बू. दोषी, राजकोट, श्री. श्रीनिवास शुक्ल, छतरपुर।

बैठक की कार्यवाही के प्रारंभ में ही अ. भा. का. मंडल की गत बैठक के पश्चात दिवंगत समाजसेवी बंधु तथा संघ के कार्यकर्ताओं को एक प्रस्ताव द्वारा मौन श्रद्धांजलि दी गई।

कार्यकारी मंडल ने गत ग्रीष्मकालीन अवकाश में सम्पन्न सघ शिक्षा वर्गों में सम्मिलित संख्या तथा स्तर पर संतोष प्रकट किया। आगामी वर्ष के विस्तृत कार्यक्रम एवं दौरों के विषय में विचार विमर्श हुआ।

बैठक में पारित प्रस्ताव निम्नानुसार हैं—

शोक प्रस्ताव

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय कार्यकारी मंडल की यह सभा हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यिक आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निधन पर अपनी शोकपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करती है। उसी भांति केरल में मार्क्सवादियों के आक्रमण के फलस्वरूप वीरगति प्राप्त सर्वश्री एन. के. हरिदास, टी. के. कुन्हीरामन तथा पी. के. वासुदेवन नम्बूद्री को भी अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करती है।

संघ परिवार तथा संघ के कार्यकर्ताओं में अनेक अपने बंधुओं के निधन पर यह सभा उनके परिवारजनों के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करती है तथा परमात्मा से प्रार्थना करती है कि यह दुख सहन करने का साहस हम सभी को प्रदान करे तथा दिवंगतों को सद्गति प्रदान करे।

अल्पसंख्यकों को सलाह

एक प्रस्ताव में मंडल ने कहा है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अ. भा. कार्यकारी मंडल देश में दिनोंदिन बढ़ रहे साम्प्रदायिक दंगों की घोर निंदा करता है। उसका यह सुविचारित मत है कि ये दंगे ऐसे लोगों के कार्यकलापों का फल है जो पद, प्रतिष्ठा तथा सत्ता की राजनीति के पीछे पड़कर केवल मत (वोट) पाने के लोभ में जातिवाद और सम्प्रदायवाद को भड़काते हैं और अल्पसंख्यकों को गुमराह करते हैं। ये ही नेता इन दंगों के लिए हमेशा सम्पूर्ण हिंदू समाज को और विशेष कर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को दोषी ठहराते हैं, कार्यकारी मंडल सभी अल्पसंख्यक बंधुओं को स्नेह पूर्ण सलाह देता है कि वे ऐसे स्वार्थी नेताओं के प्रभाव में न आकर राष्ट्र का अहित करने से अपने को बचायें।

कार्यकारी मंडल का सरकार से आग्रहपूर्ण अनुरोध है कि जब कभी तथा जहां कहीं साम्प्रदायिक दंगे हों वहां जनता की सुरक्षा की व्यवस्था करें। दंगे की अविलम्ब निष्पक्ष जांच कराए तथा जांच रिपोर्ट शीघ्र प्रकाशित करके अपराधियों को कठोर दण्ड दे।

अपने कुकर्मों को छिपाने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर लांछन लगाकर उसको बदनाम करने की राजनीतिक नेताओं की दुष्प्रवृत्ति की कार्यकारी मंडल भर्त्सना करता है संघ का यह दृढ़ विश्वास है कि जिस प्रकार गत बत्तीस वर्षों में किया गया संघ विरोधी अप्रचार शासन द्वारा ही नियुक्त जांच आयोगों ने असत्य सिद्ध कर दिया वैसी ही दशा आजकल चल रहे अप्रचार की भी होगी। संघ को पूरी आशा है कि भारत की देशभक्त तथा जागृत जनता ऐसे किसी प्रचार का शिकार नहीं बनेगी।

कार्यकारी मंडल संघ के स्वयंसेवक बंधुओं से आग्रह करता है कि सदा के समान संयम तथा विवेक से काम लेते हुए किसी भी झूठे प्रचार से विचलित अथवा क्षुब्ध हुए बिना सभी देशबांधवों को अपने स्नेह सम्पर्क में रखें तथा सभी को साथ लेकर राष्ट्रनिर्माण के अपने कार्यों में जुटे रहें।

मिजोरम की घटनाएं

मिजोरम क्षेत्र की घटनाओं पर पारित प्रस्ताव में कहा गया है कि जिस अलगाववादी मनोवृत्ति के वशीभूत होकर उग्रवादी मिजो तत्वों ने गैर-मिजो लोगों को मिजोरम न छोड़ने पर गंभीर परिणामों की धमकी दी और उसके कार्यान्वयन के लिए हत्या, आतंक लूटपाट, आगजनी तथा सैन्य छावनियों पर आक्रमण का सहारा लिया, अ. भा. का. मंडल उसकी घोर निंदा करता है। भारत एक राष्ट्र है और उसके किसी भी भूभाग में किसी भी भारतीय को मानसम्मान और सुरक्षा के साथ रहने का पूरा अधिकार है। केन्द्र व राज्य

(शेष पृष्ठ 17 पर)

इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस : लालबुझक्कड़ों

पाक्षिक पत्रिका "सैर-ब-खबर" के प्रकाशन सं० 4 (ता० 25 फरवरी से 9 मार्च, 1979) के 'नुकताए नजर' के कालम में श्री इकतदार आलम खाँ का एक लेख प्रकाशित हुआ है जिसका शीर्षक है "हिन्दुस्तानी तारीख नवीसी पर फिरका वारियत का शब्खून" (भारतीय इतिहास लेखन पर साम्प्रदायिक खूखार डाका)। इसमें "हिन्दुस्तानी तारीख नवीसी" के वास्तविक प्रतिनिधित्व के रूप में कुछ मुख्य प्रकार की वर्तमान ऐतिहासिक पुस्तकों (जिनके प्रकाशन पर लेखक के अनुसार तत्कालीन सरकार ने अवरोध लगा रखा था) तथा इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस की वार्षिक बैठकों के कार्यकलापों को प्रस्तुत किया गया है और "फिरका वारियत" की लपेट में पूरी आर०एस०एस० कम्यूनिटी, जनता पार्टी के जनरल सेक्रेट्री श्री नाना जी देशमुख, तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मंत्री पी० सी० चन्दर तथा कुछ इतिहासकारों विशेषतया प्रोफेसर खलीक अहमद निज़ामी व प्रोफेसर लल्लन जी गोपाल सभी को लपेट में ले लिया गया है। इसके अतिरिक्त शब्द "शब्खून" को अपनी नाम निहाद स्वतंत्र विचारों वाली बिरादरी पर वर्तमान काल के काल्पनिक अन्याय व अत्याचारों के प्रतीक के रूप में प्रयोग किया गया है। लेखक का उद्देश्य स्पष्टतः यह है कि वह अपने निरोह के कुछ इतिहासकारों और उनकी कृतियों की अकारण प्रशंसा के साथ-साथ देश के वामपंथियों से राजनैतिक सम्बन्ध तथा आम मुसलमानों से भावनात्मक सम्बन्ध बढ़ाना चाहता है। इसमें न केवल अपनी गलत बयानियों के द्वारा लोगों को तथ्यों से दूर रखने का प्रयास किया गया है बल्कि विवादों को जानबूझकर ऐसे नाजुक रास्तों से गुजारा गया है कि यदि कोई यथोचित रूप से विरोध भी प्रकट करना चाहे तो स्वयं उसपर आर०एस०एस० के हिमायती होने अथवा "सरकारी तारीख दानों" से गठजोड़ करने का लेबिल लगाया जा सके।

मगर आश्चर्य की बात तो यह है कि साधारणतः हर व्यक्ति स्वयं को बुद्धिमान और दूसरों को मूर्ख समझता है, परन्तु यहाँ तो न स्वयं के ज्ञान और बुद्धि पर भरोसा है और न पाठक गण के अन्यथा इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस की ख्याति उसके वर्तमान सदस्यों की सूची से न जाहिर की जाती और न ही नाम ले ले कर दूसरों पर असफल हमले किये जाते। ऐसे लेखों के न तो जवाब की आवश्यकता होती है और न ही एतराज की क्योंकि यदि "साच को आच नहीं" तो फिर झूठ को भी रोशनी की ताब नहीं। परन्तु मजलूमियत की आड़ लेकर जिस प्रकार से शिकार खेलने का प्रयास किया जा रहा है और भारतीय जन साधारण की भावनाओं के साथ जो छल-कपट का व्यवहार बरता जा रहा है, उन्हें सामने लाना भी आवश्यक है।

डॉ० शहाबुद्दीन इराकी

लेक्चरर इतिहास विभाग

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

इतिहास सम्बन्धी मार्क्सवादी दृष्टिकोण

सभी जानते हैं कि मार्क्सवादी विचारधारा रखने वालों का एक समूह पूरे भारतवर्ष में फैला हुआ है जो इस देश के सम्पूर्ण इतिहास को केवल वर्ग संघर्ष तथा भौतिकवादी विचारों (Class struggle and Dialectic materialism) के रंग में डुबो डालने के लिए प्रयत्नशील है और यह सब एक सुनिश्चित षडयंत्र के रूप में हो रहा है। इधर कुछ समय से जितनी भी पुस्तकें इस वर्ग की ओर से सामने आई हैं अथवा आ रही है उन सबका उद्देश्य प्रत्यक्ष रूप से इसी सुनिश्चित षडयंत्र का परिचायक है। इनमें "लिबरल और सेक्युलर आदर्शों" के नारे का सहारा लेकर न केवल इतिहास-लेखन की कला को विकृत किया जा रहा है बल्कि मिली जुली भारतीय सभ्यता व संस्कृति के इतिहास को पूरे तौर पर परिहास पूर्ण बना डालने का भी प्रयत्न किया जा रहा है। अपने राजनैतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये इस देश की सामाजिक-सभ्यता के इतिहास का कितना गलत और भ्रामक नक्शा प्रस्तुत किया जा रहा है उसका अनुमान इतिहास की एक पाठ्यपुस्तक के निम्नलिखित अवतरण से भलीभांति लगाया जा सकता है जिसमें वैदिक काल में सगे भाई बहनों के बीच गलत सम्बन्धों के पाये जाने का विवरण है: "We hear of brother-sister sexual relations in the case of Yama and Yami" (देखिये आर० एस० शर्मा की किताब "ऐनशियन्ट इंडिया," दिल्ली 1977, पृ० 46)

इसी प्रकार के और भी उदाहरण इस और इस जैसी दूसरी किताबों में मौजूद हैं जो उनके रचयिताओं के दोषपूर्ण विचारों का परिचय देते है। विचारणीय बात तो यह है कि उपरोक्त किताब ऐसी कुछ किताबों में से एक है जो बच्चों के निर्धारित पाठ्यपुस्तक के रूप में लिखी गई थी तथा एन०सी०ई०आर टी (दिल्ली) से प्रकाशित हुई थी। और जब सरकार ने बच्चों के मासूम दिमाग पर इसके गलत प्रभाव पड़ने की सम्भावनाओं पर विचार करते हुये इस किताब के केवल जारी होने पर पाबन्दी लगाई तो दूसरे अनुवादों के अतिरिक्त स्वयं श्री इकतदार आलम खाँ की ओर से विरोध प्रकट किया गया कि यह "सेक्युलर और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लिखी हुई तारीखी किताबों को" गुप्त रूप से 'बेअसर बनाने की कोशिशों" का नतीजा है जो वर्तमान सत्ताधारी पार्टी में शामिल "फिरकापरस्त अनासिर" (अथवा साम्प्रदायिक तत्वों) और उनके "मन्फी रुजहान" (अथवा गलत विचारों) का निर्देशन करता है। परन्तु ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि लेखक महोदय ने बस इतनी ही पर बात समाप्त नहीं की बल्कि

के भ्रष्टाचार का कसता शिकंजा

उसे एक दूसरा भी रंग देने के उद्देश्य से फरमाया कि इनकी "इशाअत" (अथवा प्रकाशन) पर पाबन्दी इस कारण भी लगाई गई कि इनमें मुसलमानों के राज्यकाल के साथ न्याय करने में कोई समझौता नहीं किया गया है।

वास्तव में यह एक लम्बी बहस है जो काफी दिनों से चल रही है और जिसका स्वयं लेखक महोदय ने भी उल्लेख किया है परन्तु उन्होंने यह नहीं बताया कि इन बातों के सन्तोषजनक उत्तर भी दिये जा चुके हैं। दूसरे साधनों के अतिरिक्त स्वयं तत्कालीन शिक्षा मन्त्री ने इंडियन हिस्ट्री ऐन्ड कल्चर सोसाइटी की फरवरी सन् 1979 में आयोजित दूसरी कान्फ्रेंस में यह स्पष्ट रूप से एलान कर दिया था कि किताबें सब छप चुकी हैं और पाबन्दी केवल एक किताब के जारी करने पर है और वह भी केवल शिक्षा सम्बन्धी विचारों के कारण। **यहाँ यह समझ लेना भी आवश्यक है कि इस एक पुस्तक के जिन हिस्सों पर सरकार को एतराज़ है वह केवल प्राचीन काल से सम्बन्धित है। अतः मध्यकालीन मुसलमानों के राज्यकाल के साथ न्याय अथवा अन्याय का तो कोई प्रश्न ही नहीं।** हाँ यदि इस गलत बयानी के माध्यम से लेखक महोदय स्वयं अपने और अपनी बिरादरी के किसी फायदे में आम मुसलमानों की हिमायत हासिल करना चाहते हों तो यह और बात है। परन्तु इस स्थिति में भी शेख अहमद सरहिन्दी तथा शाह वलीउल्ला जैसे प्रतिभाशाली मुसलमान विद्वानों के विषय में अपने अनुयाइयों के द्वारा प्रस्तुत किये हुये दूसरे प्रकार के विचारों का वह फिर क्या करेंगे ?

इकतदार आलम खाँ ने सबसे बड़ी होशियारी तो यह की कि उन्होंने केस के कमज़ोर होने का खतरा मोल नहीं लिया और इसी लिये पिछले समस्त विवादों और उनके जवाबों को एक तरफ हटाकर केवल अपनी बात कही है। अपनी लिखावट के जोश में वह इतिहास सम्बन्धी इस बात को भी भूल गये कि किसी बात को जानबूझकर सामने न लाना अथवा उसे तोड़मरोड़ कर प्रस्तुत करना कितना गलत और भ्रमात्मक होता है या फिर इसे भी उनकी "स्वयं को धोखा देने वाली एक अदा" समझी जाये।

मार्क्सवादियों की यह एक सोची समझी हुई साजिश नहीं तो और क्या है कि वह एक तरफ तो अपने विचारों का खुले आम प्रचार करते हैं और दूसरी तरफ उन सभी इतिहासकारों को बदनाम करने हेतु भांति-भांति के हथकंडे इस्तेमाल कर रहे हैं, जो उनके गलत और संकीर्ण विचारों से समझौता नहीं कर सकते। पुस्तकों से लेकर पत्रिकाओं, अखबार और समितियों तक में जहाँ कहीं भी अवसर मिलता है वह ऐसे समस्त इतिहासकारों पर किसी प्रकार के भी उल्टे-सीधे वार करने से नहीं चूकते। इसकी एक खुली हुई मिसाल इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस का हैदराबाद का सेशन है जिसमें डा० ताराचन्द से लेकर डा० के० एस० लाल और प्रोफेसर के०ए० निजामी तक सभी के इतिहास सम्बन्धी विचारों की बहुत ही भद्दे तरीके से निंदा की गई। इसके अतिरिक्त इसी कांग्रेस के सन 1972 के मुजफ्फरपुर वाले सेशन में प्रोफेसर बनारसी प्रसाद सक्सेना का बुरी तरह मज़ाक उड़ाया गया था।

इस सिलसिले में अब ऐसे मार्क्सवादियों ने एक नया तरीका ढूंढ निकाला है, वह यह कि हिन्दू सज्जनों के सामने मुस्लिम इतिहासकारों और मुसलमान सज्जनों के सामने हिन्दू इतिहासकारों को बदनाम करते फिरते हैं,जो कदाचित उनके राजनैतिक विचारों के अनुकूल है। परन्तु इससे भी अधिक खेद की बात तो यह है कि वह अपने निजी क्रोध की अभिव्यक्ति में कभी कभी एक ही व्यक्ति पर ही समय में दो परस्पर विरोधी प्रकार के आरोप लगाने का प्रयास करते हैं। उदाहरण के रूप में, प्रोफेसर खलीक अहमद निजामी को मुस्लिम फिरका परस्त होने का आरोप लगाकर उन्हें हिन्दू सज्जनों के सामने बदनाम करने की साजिश इस समुदाय के लोगों की पुरानी रस्म है जिसकी अभिव्यक्ति एक ज़माने से न केवल इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस के अधिवेशनों में बल्कि दूसरे साधनों से भी होती रही है (उदाहरण के रूप में देखिये प्रोफेसर इरफान हबीब की किताब "ऐग्रेरियन सिस्टम आफ मुगल इंडिया" और उन्हीं का शेख अहमद सरहिन्दी तथा शाह वलीउल्ला के राजनैतिक विचारों पर लिखा हुआ अंग्रेजी में लेख जो हिस्ट्री कांग्रेस के सन् 1960 के सेशन में पढ़ा गया और बाद में "इनक्वैरी" पत्रिका में वर्णित हुआ) परन्तु इधर अब आलम खाँ को इंडियन हिस्ट्री ऐन्ड कल्चर सोसायटी का सम्बन्ध आर० एस० एस० से दिखाने की आवश्यकता महसूस हुई तो उक्त महोदय ने बड़े आराम के साथ उन्हीं प्रोफेसर निजामी पर जिन पर मुस्लिम फिरकापरस्त होने का लेबिल लगाते आये हैं और लगा रहे हैं, हिन्दू साम्प्रदायिक विचारों से सम्बन्धित होने का आरोप लगा दिया।

इस दो रंगी बात का फैसला तो पाठक गण पर छोड़ता हूँ क्योंकि अपने उद्देश्यों को सामने रखते हुये समय व अवसर देखकर इस प्रकार के मनगढ़त आरोप केवल प्रोफेसर निजामी पर ही नहीं बल्कि दूसरे इतिहासकारों पर भी लगाये जाते रहे हैं, परन्तु यहाँ यह बताना आवश्यक है कि लेखक महाशय की दोनो बातें कि "प्रोफेसर खलीक अहमद निजामी ने सन् 1957 में डाक्टर यूसुफ हुसैन के साथ मिलकर भारतीय विद्या भवन की तरफ से शादी शुदा हिन्दू फिरका परस्ती की हामिल किताबों का जवाब लिखने की स्कीम बनाई थी" और यह कि "वही प्रोफेसर निजामी सन् 1978 में आर० एस० एस० के तारीखी नुक्ता ए नज़र की तरवीज का काम करने वाले इदारों और रसायल में तन्ज़ीमी ज़िम्मेदारियाँ कुबूल करते नज़र आते हैं

बिल्कुल बे बुनियाद और भ्रामक ही नहीं बल्कि स्वयं लेखक महोदय की उपरोक्त गतिविधियों को भी सिद्ध करती है। प्रोफेसर निजामी की सन् 1957 वाली स्कीम भारतीय विद्या भवन से प्रकाशित पुस्तकों से बिल्कुल भी न थी। उसका समस्त उद्देश्य मध्यकालीन भारतीय सभ्यता व संस्कृति के इतिहास का सूक्ष्म विश्लेषण कर उसे वास्तविक रूप में प्रस्तुत करना था और जनाब को उदासीन होने की आवश्यकता नहीं क्योंकि उसके शोधात्मक परिणामों का एक हिस्सा "इण्डो मुस्लिम पालिटी के रूप में शिमला से प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार प्रोफेसर निजामी की वर्तमान इंडियन हिस्ट्री ऐन्ड कल्चर सोसाइटी में शामिल होना अथवा उसकी अध्यक्षता कबूल करना किसी खास "नुक्ते-ए नजर को फरोग देने के" उद्देश्य से नहीं बल्कि भारतीय इतिहास-लेखन की कला को एक स्वतंत्र न्यायपूर्ण और निष्पक्ष वातावरण में बढ़ावा देने के सिलसिले में है जिसकी भली भाँति अभिव्यक्ति उनके इस सोसाइटी की दूसरी कान्फ्रेंस में पढ़े गये खुतबए सदारत में हुआ है और जिसे हर किसी ने पसंद किया (देखिये "मआरिफ" का मार्च सन् 1979 का प्रकाशन और "बुरहान" का अप्रैल सन् 1979 का प्रकाशन) मगर यह बातें नाम निहाद आबाद ख्याल लोगों को पसन्द आयेंगी ? सत्य और न्याय से ही तो इनकी दुश्मनी है और उसके सामने वालों से जलन व नफरत।

अपनी बनाई हुई संकुचित सीमा में रहने वाले लोगों के अतिरिक्त दूसरे विचारों के समस्त इतिहासकारों पर आरोप लगाने का यह सिलसिला और उनको बदनाम करने के हर प्रकार के प्रयत्न जो मुख्य रूप से इधर कुछ दिनों से काफी तेज हो गया है, किसी खास नाकामी या महरूमी की प्रतिक्रिया तो नहीं ? क्योंकि लेखक महोदय की जबान से निजी दुख व क्रोध का इजहार फिलहाल जिस प्रकार से हो रहा है वह बस उनके ही विचारात्मक पराजय और किसी अनजाने खौफ से डरे हुये दिमाग का निर्देशन करता है।

श्री इकतार आलम खाँ ने अपने उपरोक्त लेख में एक जगह लिखा है कि "इण्डियन कौंसिल आफ हिस्टारिकल रिसर्च (I. C. H. R.) की तरफ से मिलने वाली हिस्ट्री कांग्रेस की माली इमदाद को बन्द करवाने की कोशिशें की जा रही हैं।" इसका तात्पर्य यह हुआ कि सारा दुख दिखावा अंकाओं पर निर्भर है वास्तविकता पर नहीं। वास्तविकता तो यह है इस कांग्रेस को सदैव केन्द्रीय तथा प्रान्तीय दोनों राज्यों से अच्छी खासी आर्थिक सहायता प्राप्त रही है (पिछले हैदराबाद वाले सेशन में I.C.H.R. के द्वारा प्राप्त पचास हजार रुपयों के अतिरिक्त आन्ध्र प्रदेश सरकार से भी अच्छी खासी आर्थिक सहायता मिली थी) जिसे इसके मार्क्सवादी प्रभुत्व के लोग इतिहास-लेखन की खिदमत की जगह पर अपने विचारों के प्रचार व प्रोपेगंडा और अपने विरोह के लोगों की परवरिश के रूप में प्रयोग करते हैं। कारण यह है कि इन लोगों हिस्ट्री कांग्रेस के न केवल एकैडमिक मामलों पर अधिकार जमा रखा है बल्कि इसकी समस्त कार्यकारिणी समिति पर इन्हीं का अमल दखल है और वह यह सोचे बिना कि इस कांग्रेस के भविष्य का क्या होगा अपने अधिकारों का पूरा पूरा फायदा उठा रहे हैं।

हिस्ट्री कांग्रेस की ख्याति का चाहे जितना भी ढिंढोरा पीटा जाये और उसे इसके वर्तमान सदस्यों की सूची से सिद्ध करने के चाहे जितने भी प्रयत्न किये जायें परन्तु सच्चाई यह है कि इसकी इल्मी प्रतिभा अब समाप्त हो चुकी है और इसका कारण केवल यह है कि इस पर मार्क्सवादी विचारधारा के लोगों का पूर्ण रूप से अधिकार है। उन्होंने इसे केवल अपने विचारों को फैलाने का साधन बना रखा है और इसी कारणवश वहाँ केवल उन्हीं लोगों को बढ़ावा दिया जाता है जो कुछ बंधे 300 टके उसूलों पर निर्भर होकर लेख लिखते और पढ़ते हैं। **वहाँ वास्तव में बात लेखों की भी नहीं होती बल्कि लेखकों की होती है, और लेखकों की पहचान उनके अपने ज्ञान-ध्यान रूपी पूंजियों के हिसाब से नहीं बल्कि मार्क्सिस्टों की मंडली से सम्बन्धित होने के हिसाब** से होती है। इसी लिए हिस्ट्री कांग्रेस की प्रोसीडिंग्स में एक खास प्रकार के लेखों को ही प्रोत्साहन दिया जाता है जबकि दूसरे विचार वाले लोगों को इसमें शामिल होने का भी हक नहीं मिलता। इसकी एक खुली हुई मिसाल अलीगढ़ सेशन की 'प्रोसीडिंग्स' है जिसमें कुछ लोगों का इस तरह जान बूझकर नजर अन्दाज किया गया कि उनके लेखों की सूची तक में कहीं विवरण नहीं। इसी व्यवहार की अभिव्यक्ति कुछ साल पीछे की समस्त 'प्रोसीडिंग्स में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

हिस्ट्री कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति प्रमुख रूप से बदहाली की शिकार हुई और इसका कारण यह है कि प्रतिवर्ष इसकी तमाम मुख्य पोस्टें अपने ही कुछ आदमियों में बांट ली जाती है इसका ख्याल किये बिना कि कौन उसके योग्य है और कौन नहीं। और यह इस प्रकार से होता है कि अव्वल तो इस गिरोह के बहुत सारे लोग जो भिन्न भिन्न जगहों पर फैले हुये हैं, इसी उद्देश्य से वहाँ एकत्र होते हैं। दूसरे यह कि अलीगढ़ युनिवर्सिटी के इतिहास विभाग से बहुत सारे लोगों को केवल इसलिये जबरदस्ती वहाँ ले जाया गया है कि उन्हें अपने राजनैतिक फायदों के रूप में इस्तेमाल किया जा सके। उनके लेख पढ़े गये या नहीं इसकी किसी को परवाह नहीं होती परन्तु यह अवश्य होता है कि उनके हाथों में चुपके से एक लिस्ट थमा दी जाती है कि किसको को वोट देना हैं और किसको नहीं और इस अमिराना हुक्म की पाबन्दी सके लिए आवश्यक होती है। इसके अतिरिक्त उन्हें इस बात के लिए भी मजबूर किया जाता है कि वह उनके हर काम और हर बात का प्रचार करते फिरें। क्या यही स्वतंत्र कार्यों व स्वतंत्र विचारों के उदाहरण हैं जिन पर गर्व किया जा रहा है।

वास्तव में इन्हीं बातों के कारण जब इन्डियन हिस्ट्री ऐन्ड कल्चर सोसायटी स्थापित हुई तो लोगों ने बजा तौर पर कहर व जब्र तथा घुटन वाले वातावरण से छुटकारा पाने का अवसर पाकर इतमिनान की सांस ली। इस सोसाइटी को न केवल व्यक्तिगत आलोचनाओं से अलग अलग रखा गया बल्कि

इसमें सभी प्रकार की विचारधारायें रखने वाले विद्वानों को स्वतंत्रापूर्वक शामिल किया गया और उनकी बातों पर पूरा पूरा ध्यान दिया गया परन्तु लोगों को ऐसा होना भी गवारा न हुआ और इसकी स्थापना के तुरन्त बाद ही इस पर आरोपों की बौछार होने लगी। बड़े आश्चर्य की बात है कि इस नो जन्मित सोसायटी को (जिसे स्वयं श्री इकतदार आलम खाँ केवल एक "जमायत" के नाम से याद करते हैं) इन्डियन हिस्ट्री कांग्रेस "भड़े मक़ाबिल" या उसके 'खिलाफ एक महाज" के रूप में क्यों समझा जा रहा है। भारत में इतिहास लेखन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से बहुत सारी अन्जुमने व सोसाइटियां पहले से मौजेद हैं। क्या वह सब इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस को समाप्त करने हेतु स्थापित की गई थी और क्या उनमें स्वयं लेखक महोदय और उनके अनुयायी सज्जन शरीक नहीं होते आये हैं ? लगता हैं मौसूफ को यह सोसाइटी केवल इसलिये पसन्द नहीं आई कि इस पर उनके अपने लोगों का रोब दाब नहीं हो सका जिसके कि वह खाहिशमंद रहते हैं और जिसे इन्डियन हिस्ट्री कांग्रेस पर पूर्ण रूप से लागू कर रखा है।

यह बात अब ढकी छुपी नहीं रही कि पिछले राज्यकाल में इन लोगों ने इस कौन्सिल के समस्त मामलों पर पूर्ण रूप से अधिकार जमा रखा था (विस्तार पूर्वक जानकरी के लिये 22 अप्रैल सन् 1979 का "अल्जमय्यतह" अखबार देखा जा सकता है)। यह कहना गलत न होगा कि इसे न केवल अपने निजी फायदों के रूप में प्रयोग किया गया बल्कि इसमें हर प्रकार की बद उनवनियाँ भी फैलाई गई। तमाम बड़े प्रोजेक्टस केवल अपने ही कुछ आदमियों में बाँट कर उन्हें उलटे सीधे फायदे पहुँचाये गये। इसके अतिरिक्त देश की चौदह भाषाओं में पुस्तकों के अनुवाद की स्कीम के अन्तर्गत केवल अपने ही गिरोह के कुछ लोगों की किताबों को लिया गया और इस प्रकार उन्हें चौदह हजार रुपये प्रति किताब का फायदा पहुँचाया गया। दूसरी

(शेष पृष्ठ 17 पर

रपट

रक्षा सम्बन्धी अनुसंधान कार्यों पर विश्व की सर्वाधिक राशि व्यय

अभी हाल ही में प्रकाशित एक अनुसंधान अध्ययन दल की रिपोर्ट के अनुसार विश्व की सरकारें ऊर्जा व अन्य सामाजिक लाभ-प्रद विषयों को अधिक प्राथमिकता देकर वैज्ञानिक अनुसंधान पर बल प्रदान कर रही हैं।

उक्त रिपोर्ट गत 28 जुलाई को वाशिंगटन में एक गैर-सरकारी संगठन "वर्ल्डवाच", जिसका उद्देश्य विभिन्न सांसारिक विषयों पर अध्ययन करना है, द्वारा प्रसारित की गई है। इसके अनुसार समस्त विश्व में अनुसंधान और विकास की मद पर प्रतिवर्ष 150 अरब डालर की राशि व्यय होती है।

"परन्तु सैनिक अनुसंधान और विकास पर इस राशि का एक चौथाई भाग खर्च किया जाता है। नई ऊर्जा तकनीक पर खर्च किए गए खर्च से तीन गुणा अधिक सर ऊर्जा, स्वास्थ्य, खाद्य उत्पादन व वायु प्रदूषण की सुरक्षा पर मिलाकर खर्च की गई राशि से भी अधिक व्यय होता है। रिपोर्ट के लेखक मि० कालिन नारमैन के अनुसार ऐसा देखने में आता है सरकारों ने ऊर्जा, वायु प्रदूषण व स्वास्थ्य आदि पर अपना अनुसंधान व्यय बढ़ा दिया है। उनके मतानुसार विशेषतया ऊर्जा अनुसंधान पर यह अधिक बढ़ा हुआ दृष्टि-गोचर होता है। अधिकतर देशों में यह पाया जाता है कि ऊर्जा का एक सुदृढ़ स्त्रोत राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण बन सकता है जितना एक नया हथियार।

इस अध्ययन का खर्च यूनाईटिड नेशनल एनर्जी प्रग्राम (यू०एन०ए०पी०) द्वारा वहन किया गया। अध्ययन में कहा गया है कि विश्व के तीन करोड़ वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के ज्ञान को नई खोजों में लगाने का प्रयास किया जाना चाहिए।

"परन्तु अनुसंधान व विकास का खर्चा आशा के अनुरूप अधिकतर अमीर व औद्यो-गिक देशों में ही अधिक है तथा जबतक विश्व की अनुसंधान व विकास की क्षमता औद्योगिक प्रधान देशों में ही केन्द्रित रहेगी तब तक धनी देशों की समस्याओं पर ही ध्यान केन्द्रित रहेगा। इस को स्पष्ट करते हुए मि० नारमैन ने मेडिकल अनुसंधान का उदाहरण देते हुए बताया कि लगभग तीस लाख डालर सारे विश्व में अपनवृत सम्बन्धी रोगों पर खर्च किया गया। अभी सयुक्त राज्य कैन्सर व हृदय रोगों पर एक अरब डालर से भी अधिक व्यय कर रहा है। ये रोग अमीर व विकसित देशों के ही रोग हैं।

रिपोर्ट के अनुसार अकेले संयुक्त राज्य अमेरिका में विश्व के अनुसंधान व विकास पर होने वाले व्यय का एक तिहाई हिस्सा, पश्चिम यूरोप व जापान का सयुक्त खर्च दूसरे तिहाई हिस्सा का है। इसके अलावा सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप मिलकर 30% व्यय करते हैं। इसमें विकासशील राष्ट्र सम्मिलित नहीं हैं, जहाँ विश्व की 80% जनसंख्या रहती है वहाँ विश्व का इस मद पर व्यय होने वाली राशि का 5% से भी कम भाग खर्च होता है।

लेखक के अनुमानानुसार सम्पूर्ण विश्व के अनुसंधान व विकास बजट का आठ प्रतिशत ऊर्जा की मद पर, स्वास्थ्य मद पर सात प्रतिशत, परिवहन, प्रदूषण नियंत्रण पर पाँच-पाँच प्रतिशत और नती प्रतिशत कृषि औद्योगिक अनुसंधान व विकास पर व्यय किया जाता है।

मि० कालिन ने बताया कि अधिकतर देशों में राशि का सैन्य हिस्से में कटौती की जा रही है। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका में 1950 में सैन्य सम्बन्धी व्यय सत्तर प्रतिशत था जो कि अब घटते-घटते पचास प्रतिशत हो गया है। विश्व अनुसंधान और विकास खर्च की विकास दर सामान्यतया पिछले दस वर्षों में कम हुई है या रुक गई है। इससे धन की स्पर्धा को जहाँ बढ़ावा मिलता है वहाँ अनु-संधान की प्राथमिकताओं को बदलने में भी कठिनाईयों को बढावा मिलता है।

प्रस्तोता—राजकुमार शर्मा

परीक्षा पद्धति में सुधार

□ प्रभु चावला

भारत के एक सौ से अधिक विश्वविद्यालयों से सम्बन्धित 4500 कालेजों में प्रतिवर्ष 1,20,000 से अधिक विद्यार्थी परीक्षाओं में नकल करने के आरोप में पकड़े जाते हैं। परन्तु नकल अब केवल विश्वविद्यालयों तक सीमित नहीं है। इस वयस्क बीमारी का तीव्र प्रभाव देश भर में स्कूलों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों पर पड़ा है। ऐसा अनुमान है कि पिछले वर्ष हायर सैकण्डरी की परीक्षा में बैठने वाले हर पाँचवे छात्र ने परीक्षा में किसी न किसी प्रकार के अनुचित साधन का प्रयोग किया।

आश्चर्य की बात तो यह कि परीक्षा में नकल करने का प्रोत्साहन प्राध्यापकों तथा अभिभावकों की ओर से अधिक मात्रा में मिलने लगा है? बिहार में पिछले वर्ष एक परीक्षा केन्द्र पर पुलिस को अभिभावकों की भीड़ को तितर बितर करने के लिये लाठी चार्ज करना पड़ा। अभिभावकगण परीक्षा में अपने बच्चों की सहायता हेतु वहाँ एकत्रित हुए थे। देश के विभिन्न भागों में 100 से अधिक प्राध्यापकों के विरुद्ध छात्रों को नकल कराने के आरोप में अनुशासनात्मक कारवाई की जा चुकी है।

प्रश्न यह उठता है कि नकल की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के क्या कारण है? वस्तु स्थिति तो यह है कि 150 वर्ष पुरानी हमारी शिक्षा पद्धति में किसी भी प्रकार का सुधार न होना अपने आप में अनेक बुराईयों की जननी का कारण है। परन्तु परीक्षा पद्धति इस अनुपयोगी शिक्षा प्रणाली की सबसे भयंकर बुराई प्रतीत होती है।

अनेक प्रकार की विभिन्नताओं के बावजूद सारे देश में शिक्षा प्रणाली में जो एक समानता पाई जाती है वह है परीक्षा पद्धति। देश भर के स्कूलों कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में प्रतिवर्ष प्रत्येक विद्यार्थी को जो एक कार्य करना पड़ता है वह है—दो या तीन घन्टे की परीक्षा में सारे वर्ष के दौरान प्राप्त शिक्षा का मूल्यकंन करवाना। चूंकि यह तीन घन्टे प्रत्येक विद्यार्थी के भविष्य का निमार्ण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं इसलिये शिक्षक एवं छात्र का पूर्ण समय इनको सफल बनाने की ओर लगा रहता है।

इसलिये भारतीय शिक्षा प्रणाली केवल एक वार्षिक औपचारिकता के अलावा कुछ नहीं है। जिसमें प्रत्येक वर्ष 4,60,000 स्कूली अध्यापक, 9,50,000, कालेज तथा विश्व-विद्यालय के प्राध्यापक 10 करोड़ से अधिक छात्रों की प्रतिभा का मूल्यांकन करते है।

परन्तु स्कूलों तथा कालेजों में लगातार बढ़ती हुई छात्रो की संख्या ने शैक्षणिक संस्थाओं की प्रशासनिक क्षमता पर ऐसा दबाव डाला है कि परीक्षा सिवाय ढकोसले बाजी के कुछ नहीं रह गई है। पुलिस की सहायता से परीक्षा करवाना विश्वविद्यालयों की कमजोरियों का एक बहुत बड़ा सबूत है। क्या इस प्रकार की परीक्षा पद्धति वांछनीय है जिनके द्वारा न तो छात्र की वास्तविक प्रतिभा का मूल्यांकन हो सके और न ही इस प्रणाली की प्रामाणिकता को सिद्ध किया जा सके?

वास्तव में भारतीय शिक्षा पद्धत्ति में कई त्रुटियाँ है। इनमें से महत्वपूर्ण है प्रणाली की संदिग्ध प्रमाणिकता एक अपूर्णता। परीक्षा पद्धति अपूर्ण इसलिये है क्योंकि 2 या 3 घन्टे के दौरान किसी भी छात्र द्वारा प्राप्त वर्ष भर की शिक्षा का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं हैं जहाँ सारे वर्ष वर्ष कालेज की लायब्रेरी में पढने वाले छात्र परीक्षा में या तो फेल हुए है अथवा काफी कम अंक प्राप्त किये है इसके विपरीत जो छात्र कभी कक्षाओं में भी नियामित रूप से नहीं गये। परीक्षा में अच्छे अंक पाकर सफल हुए है।

परीक्षा पद्धति की अपूर्णता एक और भी कारण है। कोई भी 10 या 12 प्रश्नों के माध्यम द्वारा सारे पाठयक्रम को समेट नहीं पाता है। फलस्वरूप छात्रों को प्रतिवर्ष घिसे पिटे प्रश्नों का उत्तर देना पड़ता है। इसके अतिरिक्त बाहरी परीक्षा पद्धत्ति की अपनी कुछ सीमाएँ भी है। एक ओर यह प्रणाली काफी खर्चीली है और प्रशासनिक दृष्टि से अति कठिन। इसलिये प्रत्येक शिक्षा अधिकारी चाहे वह स्कूल परीक्षा से सम्बधित हो अथवा विश्वविद्यालय परीक्षा से, यह प्रयत्न करता है कि परीक्षा कम से कम खर्च तथा कम से कम समय में समाप्त हो जाय! इन दोनों उद्देश्यों की प्राप्ति करने के लिये परीक्षा पद्धति की पूर्णता का ख्याल नहीं रखा जाता है।

साधन एवं समय के अभाव तथा छात्रों की सेना—इन सब का गठजोड़ परीक्षा पद्धति को विसफल करने में काफी सफल रहा है।

परन्तु परीक्षा पद्धति की संदिग्ध प्रामाणिकता इसका महत्वपूर्ण दोष है। जब बाहरी परीक्षा के द्वारा समस्त छात्रों की शैक्षणिक क्षमता का मूल्यांकन ऐसे प्राध्यापकों तथा अध्यापकों द्वारा किया जाता हो जिनका विषय के प्रति दृष्टिकोण पूर्णतया विभिन्न हो तो प्रत्येक छात्र को समान उत्तर के लिये असमान अंक मिलना साधारण बात हो जाती।

परीक्षा पद्धति पर किये गये कई प्रकार के शोध कार्यों से यह सिद्ध हो गया है की परीक्षकों का परिक्षार्थियों के प्रति दृष्टिकोण एक एक समान नहीं होता है। एक उदाहरण के अनुसार एक क्षेत्र के छात्रों में ही अध्यापकों द्वारा एक ही विषयमें उत्तीर्ण करने वाले छात्रों की संख्या विभिन्न थी। जब कि एक अध्यापक के अनुसार उत्तीर्ण होने वाले छात्रों

की संख्या 96 प्रतिशत थी जबकि दूसरे अध्यापक ने केवल 11 प्रतिशत छात्रों को ही उत्तीर्ण घोषित किया एक अन्य प्रयोग के अन्तर्गत एक ही छात्र की उत्तर पुस्तिका 90 निरीक्षकों के पास भेजी गई जिनमें से एक निरीक्षक ने उस छात्र को 75 प्रतिशत अंक, तथा 8 ने 60 प्रतिशत अंक, 42 ने 50 प्रतिशत अंक, 33 ने 36 प्रतिशत अंक तथा सात ने 30 प्रतिशत अंक दिये। इस प्रकार का मूल्यांकन परीक्षा पद्धति की प्रमाणिकता को काफी संदिग्ध बनाता है। ऐसा भी देखने में आया कि निरीक्षकों का मूल उद्देश्य केवल पैसा कमाना हो गया है इसलिये परीक्षार्थी इसका फल भोगता है। दिल्ली विश्वविद्यालय में ऐसे प्राध्यापकों की संख्या 95 से अधिक है जो प्रतिवर्ष विश्वविद्यालय से 90000 रु० से अधिक राशि केवल परीक्षा कार्य के लिये उन्हें कम से कम 90 घंटे प्रतिदिन अतिरिक्त कार्य करना चाहिए क्योंकि इतना कार्य करना शायद सम्भव नहीं इसलिये उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

केवल विश्वविद्यालय स्तर पर 35 लाख से अधिक छात्र प्रतिवर्ष परीक्षा देते हैं और कुछ वरिष्ठ प्राध्यापक काफी बड़ी मात्रा में कई विश्वविद्यालयों की उत्तर पुस्तिकाएँ प्राप्त करते हैं।

काफी बड़ी मात्रा में ऐसे प्राध्यापक मिलेंगे जो प्रतिवर्ष 5000 से अधिक उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन करते हैं। क्या 30 या 40 दिन में इतनी सारी पुस्तिकाओं की पूर्ण जाँच करन सम्भव है? नहीं। इसका स्पष्ट मतलब है कि प्राध्यापकगण उत्तर पुस्तिकाओं को या तो खुद जाँचते नहीं और अगर स्वयं जाचते हो तो यह कार्य पूर्ण तन्मयता से नहीं होता!

वर्तमान परीक्षा पद्धति की इतनी अधिक कमजोरियों के बावजूद भी इसका बने रहना भारतीय शिक्षा जगत के इतिहास में अपने आप में हास्यापद है।

पिछले 100 वर्षों में लगभग 50 से अधिक आयोगों एवं समितियों ने अपनी रिपोर्टों में परीक्षा पद्धति को बदलने के कई सुझाव दिये है परन्तु उन पर किसी भी प्रकार का अमल नहीं किया।

वास्तव में परीक्षा पद्धति में सुधार की आवश्यकता 1841 में शिक्षा प्रणाली के प्रारम्भ होने के 20 वर्ष पश्चात् महसूस होने लगी थी, जब कलकत्ता स्थित एक कालेज के प्रिन्सिपल ने 1871 में यह कहा था कि वर्तमान परीक्षा पद्धति छात्रों को केवल रट्टा लगाने की मशीन बना देती है जिसको एक वर्ष के दौरान बहुत बड़ी मात्रा में ज्ञान को अपने अन्दर भर कर परीक्षा के दिनों में वापिस उगलना होता है। 1902 में भारतीय विश्व विद्यालय आयोग ने परीक्षा पद्धति के बारे में कहा" हमारी उच्च शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण बुराई परीक्षा पद्धति से सम्बन्धित है। पढाई परीक्षा पर आश्रित है न कि पढाई पर परीक्षा।

वर्तमान परीक्षा पद्धति ने शिक्षक शिक्षार्थी के आपसी सम्बन्धों को दृढ़ बनाने के बजाय कमजोर बनाया है। पाठयक्रम एवं परीक्षा में किसी प्रकार का तालमेल न होने के कारण शिक्षक—शिक्षार्थी सम्बन्ध केवल मात्र औपचारिकता बनकर रह गये है। परीक्षा में अंक प्राप्त करने के उद्देश्य को लेकर पाठयक्रमों की घोर उपेक्षा करना विद्यार्थियों के लिये आवश्यक है। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952) के अनुसार आज की परिक्षाएँ पाठयक्रमों को तय करती है जबकि पाठयक्रमों द्वारा परीक्षाएँ तय होनी चाहिएँ।

परीक्षा पद्धति की त्रुटियों के कारण ही शिक्षा प्रणाली में सुधार नहीं हो पाये है। शिक्षाविदों में इस विषय पर मतभेद हो सकता है कि घटिया शिक्षाप्रणाली गलत परीक्षा पद्धति का कारण है या नहीं। परन्तु यह बात तो सच है कि बिना अच्छी परीक्षा पद्धति की कल्पना किये शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण सुधारों की बात शायद असंभव प्रतीत होती है।

शिक्षा प्रणाली के सुधारों की समस्या काफी सैद्धान्तिक प्रश्नों के साथ जुड़ी हुई है और वर्तमान राजनैतिक परिवेश में इस प्रणाली में कुछ सुधारों की अपेक्षा करना राजनीतिज्ञों से उनकी शक्ति से अधिक माँगने की बात होगी।

परन्तु परीक्षा पद्धति में सुधार लाना बहुत ही आवश्यक है। इन सुधारों को लागू करने से पहले दो प्रश्नों का उत्तर आवश्यक दिखाई पड़ता है। प्रथम, क्या परीक्षा को शिक्षा का अटूट अंग बनाना आवश्यक है? द्वितीय, क्या नई परीक्षा पद्धति, अभिभावकों, शिक्षकों तथा रोजगार प्रदान करने वाली संस्थानों को इस बात का ज्ञान प्रदान करने में सहायक होगी कि परीक्षा पद्धति द्वारा विद्यार्थियों के वास्तविक ज्ञान का मूल्यांकन हो सकता है?

पहले प्रश्न का उत्तर काफी कठिन दिखाई पड़ता है। कुछ शिक्षा शास्त्रियों का मत है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल मनुष्य को जीवन के विभिन्न पहलूओं का ज्ञान कराना है न कि किसी को पास एवं फेल करना। परीक्षा तो केवल रोजगार प्राप्त करने के लिये आवश्यक कागजी शैक्षणिक योग्यता प्राप्त करना है, अगर डिग्री अथवा औपचारिक शिक्षा को रोजगार से अलग कर दिया जाय तो शिक्षा प्रणाली में परीक्षा की आवश्यकता नहीं होगी।

दूसरी ओर कुछ लोगों का मत है कि विद्यार्थी की योग्यता का मूल्यांकन करने के लिये किसी न किसी प्रकार का मापदण्ड तो होना ही चाहिए अन्यथा शिक्षा का कुछ महत्व नहीं रह जाता। एक स्तर से दूसरे शैक्षणिक स्तर पर विद्यार्थी को भेजने के लिए किसी प्रकार की प्रक्रिया का होना आवश्यक है अथवा तमाम लोगों को भीड़ के समान विश्व-विद्यालय स्तर तक ले जाना होगा।

विद्यार्थियों की शैक्षणिक योग्यता का आकलन किसी भी ढंग से किया जाय, उस पद्धति में कोई न कोई दोष अवश्य है। पिछले दो वर्षों में बाहरी शिक्षा पद्धति तथा आन्तरिक मूल्यांकन के मिश्रण द्वारा विद्यार्थियों की

(शेष पृष्ठ २१ पर

विज्ञान में धोखाधड़ी

□ वाई० पी० गुप्ता

अगर किसी विकसित देश में कोई वैज्ञानिक कोई सन्देहयुक्त दावा करता है तो उसे वैज्ञानिकों की समिति के सम्मुख उपस्थित होकर अपने अन्वेषण के विषय में बताना पड़ेगा यदि वह ऐसा करने में असफल होता है तो उसकी मान्यता समाप्त कर दी जाती है। परन्तु भारत में अधिकार प्राप्त वैज्ञानिकों द्वारा किए जाने वाले दावे अधिकतर बिना किसी छानबीन के रह जाते हैं यद्यपि बिना देखे नहीं। इस प्रवृत्ति से फर्जी अनुसंधान को बढ़ावा मिला है।

ऐसा सिर्फ भारत में ही नहीं अपितु यूरोपियन देशों में भी विज्ञान के क्षेत्र में धोखाधड़ी के कई उदाहरण हुए है। बहुत पुरानी घटना नहीं है। स्लान केटरिंग संस्थान में एक ऐसी बात सामने आई जिसके परिणामस्वरूप उसके निदेशक डा० समरलिन को पद से हटाने के लिए दबाव डाला गया। डा० समरलिन का दावा था कि उन्होंने सफेद चुहिया को काले रंग में परिवर्तित करने में सफलता प्राप्त कर ली है किन्तु यह दावा सत्य से कोसों परे था। इसी प्रकार जार्ज बैबस्टर का दावा और भी अच्छा था। डेविड ई० ग्रीनस लेबोट्रेरी इन्जीम संस्थान विकासन्सीन (यू० एस० ए०) पर उनके दावे धोखेपूर्ण थे। डा० ग्रीन ने जनसाधारण स्तर पर बैबस्टर के दावे को पाखण्ड बताया। हांलाकि बैबस्टर ने अपनी बेईमानी को न्यायसंगत बनाने का पूरा प्रयत्न करते हुए डा० ग्रीन को कड़ा मेहनती बताया जोकि परिणाम के लिए बहुत अधिक इच्छुक है। परिणाम यह हुआ कि बैबस्टर को ग्रीन की लेबोट्रेरी से हटाना पड़ा और साथ ही वैज्ञानिक समुदाय से बाहर निकाल दिया गया।

ऐसी ही धोखाधड़ी की एक दूसरी घटना में दो आस्ट्रीयन माइक्रोबायलोजिस्ट-हरबरट सचदन और उनके सहायक हरथा कास्टा ने दावा किया कि उन्होंने एक ऐसा माइक्रोब तैयार किया है जो प्लास्टिक को हजम कर सकता है किन्तु इस घोषणा के चार वर्ष पश्चात् तक इस कार्य का कोई चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं हुआ। परिणाम जो होना था वही हुआ सचदन महोदय को जेल भेज दिया गया। इनके ऊपर एक डच फर्म से पचास हजार पाउण्ड के धन हड़पने का आरोप था। एक ओर दूसरी घटना में डा० राबर्ट गुलीस जिन्होंने एक ब्रिटिश विश्वविद्यालय व बाद में मैक्स प्लेन्क संस्थान म्यूनिख (जर्मनी) में कार्य किया था, ने एक बयान जो "नेचुर" नामक पत्रिका (24 नवम्बर 1977) के अंक में प्रकाशित हुआ, कहा कि शोध कार्य (पी० एच० डी०) "खोजपूर्ण आंकड़ों" पर आधारित था और विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित आठ अनुसंधान पेपर भी कल्पना पर आधरित थे न कि व्यावहारिक प्रयोग पर आधारित। ऐसा बताया जाता है कि छलकपट की इन घटनाओं के पीछे "परिणाम के लिए पागलपन" का होना था।

कई बार किसी वैज्ञानिक की प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए चाटुकारिता पूर्ण मत व्यक्त कर दिये जाते हैं। जीवन वृतांत के कई उदाहरण छाप दिए जाते हैं। सर साइरील बर्ट को मृत्यु के पश्चात् ऐसा कहा गया कि कुल मिल कर जो छाप उसने छोड़ी, उससे पत्राचार करके, उससे बातचीत करके और उसको देखकर असल में बिल्कुल साफ है। उसका व्यक्तित्व, उसकी शारीरिक क्षमता, उसका शहरी आचरण, उसका अनुसंधान के प्रति पूरा सप्ताह-पक्ष विपक्ष, आलोचना, जैसे कि उनका हस्तलेख अच्छा होना और उसकी बुद्धिमता यह सारा मिलाकर उसको एक जन्मजात महान आदमी प्रदर्शित किया जाता रहा किन्तु पिछले दिनों बर्ट को बुद्धिमता और वंश परम्परा के सम्बन्ध में सर्वत्र छपी उसकी बातों को झूठा ठहराया गया।

भारतीय विज्ञान को भी ऐसी घटनाओं से गुजरना पड़ा है। वैज्ञानिक धोखाधड़ी इस देश के लिए कोई विशेष बात नहीं है। इसका उपयोग ख्याति व सफलता पाने के लिए सरलता से किया जाता है। मुख्य पद हथियाने और लब्ध प्रतिष्ठित पुरस्कार पाने के लिए भी यह किया जाता है। परिणामस्वरूप इस प्रवृत्ति के कारण अनुसंधान क अध्याय में एक नया वर्ग पैदा कर दिया जिसका नामकरण "मिथ्या वैज्ञानिक" है।

"शरबती सोनार गेहूँ" की चर्चित आलोचनाप्रद घटना जोसफ हानलन द्वारा विश्व के सम्मुख लायी गई। जो ब्रिटिश पत्रिका "न्यू साइन्टिस्ट" के 7 नवम्बर 1974 के अंक में छपी थी। भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान एकादमी के भूतपूर्व प्रधान डा० बी० आर० सच्चर ने डा० हानलन को उनके इस कार्य पर बधाई दी व विकसित देशों के वैज्ञानिकों की इच्छा की भी आलोचना करते हुए कहा कि उनको विकासशील देशों के वैज्ञानिकों का आदर करना चाहिए।

"टैस्ट ट्यूब बेबी" का दावा भी दूसरा एक ऐसा ही विवादपूर्ण विषय है। इस देश में मिथ्या अनुसंधान पर ब्रिटिश वैज्ञानिक पत्रिका "नेचुर" के 20 फरवरी 1975 के अंक में एक लेख छपा जिसका शीर्षक "डिड डा० शाह डाई इन वेन" था। इस लेख में गजेन्द्रगडकर समिति की यांत्रिक सलाहकारों सम्बन्धी विचारों का भी वर्णन था। वह मिथ्या, जिसका आई० सी० ए० आर० से सम्बन्ध नहीं था, ऐसा उन्होंने विचारा था। अनावश्यक छूट को हटाते हुए देश के समस्त वैज्ञानिक एकादमी समुदाय में व्याप्त कर दिया था। इसकी जड़ में नौकरशाही सत्ता के प्रति लिप्सा व सुविधाभोगी जीवन के प्रति प्यार है जो कि इस वर्ग के सर्वथा विरुद्ध है। छोटे स्तर के वैज्ञानिक बड़े स्तर के वैज्ञानिकों की भाँति भ्रष्ट हैं। राजनीति ने वैज्ञानिक व अकादमी जीवन को काफी दूषित किया है।

इसी लेख में इस बुद्धिमानीपूर्ण भ्रष्टता के उत्पत्ति के कारणों में नौकरशाही, सुविधा-

जनक पद, सत्ता का केन्द्रीयकरण, स्नातकों की बहुत संख्या का भेजना जिनमें प्राय: विवाह के लिए प्राप्त करते हैं। धन की कमी, यांत्रिक अवयवों का घटियापन और अवसरों की असमनता व्याप्त होना माना गया है। इस लेख में भारत के प्रधानमंत्री से यह सिफारिश की है कि उनको ऐसे लोगों के सम्बन्ध में सख्त कार्यवाई करनी चाहिए ताकि वैज्ञानिक समुदाय का स्तर निम्न न होवे।

इस अनुसंधान को जालीपन का पता ब्रिटिश पत्रिका न्यू साइन्टिस्ट में छापा गया था जिसमें "विज्ञान में बेईमानी" का प्रश्नांक था जिसके साथ दो महत्वपूर्ण प्रश्न जुड़े थे।

क्या विज्ञान जगत में जानबूझकर पक्षपात लिया जाता है साथ-साथ सर्वसाधारण में भी। और गलत प्रतिनिधित्व व बिना गलती के अन्तर को परिभाषित करने में किस तरह के सबूत की आवश्यकता है? इसकी छानबीन 184 जानबूझकर किये गये पक्षपात पूर्ण उदाहरणों पर इसकी वैधता आधारित है जोकि फिजिक्स (12%) कैमिस्ट्री (10%) बायोकैमीस्ट्री (10%) और बायोलाजी (8 / 1 / 2%) बायलाजीकल कैमस्ट्रीस (बायोकैमस्ट्री, माइक्रोबायोलाजी, एन्डोक्रीनोलाजी, न्यूरोकैमस्ट्री, जैनिरिक्स इकोनालाजी और फारममाकालोजी) ये सभी सबसे बड़ी कैटेगरी है जिसमें कुल मिलाकर 16% है अगला स्थान दूसरी जीव विज्ञानों पर आता है जिसमें बोटेनी, बायोलाजी, जूलाजी, मछली अनुसंधान है। जिसमें 14% आता है और मैडीकल विज्ञान है जिसमें मैडीसिन स्वास्थ्य, शरीर विज्ञान एकानामी, बायोलाजी और पशु चिकित्सा विज्ञान जिसमें 8% आता है।

साइरिलबर्ट की उदघोषणा से पता चलता है कि जानबूझकर अप्रतिनिधित्व काल्पित अनुसंधान जोड़ा जाता है। बर्ट के पश्चात् उसकी खोज को पूरी अपनाया गया।

जानबूझकर पक्षपात पूर्ण रवैये के साथ क्या हुआ? इस प्रश्न पर प्रतिक्रिया यह थी, कि "पदोन्नति" पद से निकासन। जो कि 10% मामलों में हुआ। 3% प्रतिशत मामलों में डांटा गया। जबकि फंड के वापस लेने, आव्ययन आदि के मामले केवल एक प्रतिशत थे। इस छानबीन ने एक समस्या खड़ी कर दी कि क्या ऐसे वैज्ञानिकों के झूठे दावों से विज्ञान को लाभ हुआ है या उनका अपना लाभ ऐसे अनुसंधानों के बने रहने से हुआ है।

इसी तरह के एक सर्वेक्षण में जो कि विज्ञान में बेइमानी पर किया था यद्यपि जिसकी आवश्यकता भारतीय विज्ञान में झूठे अभ्यासों को हटाने के लिए पड़ सकती है। अभाग्य से वर्तमान समय यह सम्भव बन गया है कि यहां तक कि वैज्ञानिक पत्रिका पर ऐसे कुप्रभाव का प्रयोग लाया जा सकता है। अब समय आ गया है कि ऐसे तत्वों को निकाल बाहर फेंके। ताकि विज्ञान के विकास का लाभ से समाज की आर्थिक सामाजिक स्थिति को बदलकर समाज कल्याण किया जा सके।

यह सुझाया गया है कि विज्ञान चौकसी हेतु आयोग बनाये जाने चाहिए ताकि अवैज्ञानिक कारवाइयों को रोका जा सके जो कि झूठे दावों द्वारा की जाती है जिससे विज्ञान जगत को बदनामी से बचाया जा सके। ऐसे आयोग वैज्ञानिकों की कारवाइयों पर निरीक्षण का कार्य करेंगे।

(पृष्ठ 13 का शेष)

इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस

तरफ किताबों के उर्दू अनुवाद का पूरी यूनिट अलीगढ़ में स्थापित करके उसके तमाम मामलात स्वयं इकतदार आलम खां के हवाले किये गये। क्या यह सवाल करना गलत होगा कि जनाब का उर्दू भाषा व साहित्य में ऐसा कौनसा कारनामा है जिसके आधार पर किताबों के उर्दू रूपान्तर का यह पूरा यूनिट उनके हवाले किया गया है। इस रास्ते से उन्होंने स्वयं अपने आपको तथा अपने दोस्तों और अजीजों को जिस जिस तरह से फायदे पहुँचाये है उसका उदाहरण मिलना कठिन है। श्री इकतदार आलम ने स्वयं तथा उनके पिताजी और दो सगे बहनोइयों ने इस काम से 25,000 रु० की धन राशि एकत्रित की है। इसके अतिरिक्त इस यूनिट ने 28 पुस्तकों का काम किया, जिसमें इन सबों के नाम 9 पुस्तकों से सम्बन्धित है जो पूरे काम का लगभग 33 प्रतिशत होता है। जो बाकी काम है वह सब का सब अपने गिरोह के लोगों से कराया है।

यह सारी चीज वास्तव में छानबीन की मुहताज है। अत: इन लोगों के तमाम कारनामों की पूर्ण रूप से जाँच पड़ताल होनी चाहिये ताकि इनकी असल शातिराना चालों और पुरफ़रेब पचले-बाजियों का पर्दाफ़ाश हो हो सके अन्यथा इसी प्रकार मज़लूमियत की आड़ लेकर अपना उल्लू सीधा करते रहेंगे और लोगों को धोखा देते रहेंगे।

(शेष पृष्ठ 9 का)

अल्पसंख्यक बंधु राष्ट्र का अहित करने से स्वयं को बचावें

शासनों ने उग्रवादी तत्वों को दबाने के लिए जो कठोर रुख अपनाया वह उचित और आवश्यक होते हुए भी समस्या का केवल तात्कालिक समाधान प्रस्तुत करता है। समस्या के स्थायी हल के लिए उन कारणों को दूर करना आवश्यक है जो हमारे पर्वतीय अंचल के बंधुओं को राष्ट्र की जीवनधारा से अलग करते हैं क्योंकि यह समस्या केवल मिजोरम तक ही सीमित नहीं है, नागालैंड, मणिपुर और मेघालय में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो अपने को अलग राष्ट्र मानकर अन्य राज्य के निवासियों को विदेशी कहते हैं।

अ. भा. का. मंडल का केन्द्र सरकार से अनुरोध है कि वह प्रशासनिक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल पर उचित कदम उठाकर इस समस्या के शीघ्र समाधान का प्रयत्न करे। साथ ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं से भी अनुरोध है कि वे इन पर्वतीय अंचलों के निवासियों से मधुर आत्मीय संबंध स्थापित करते हुए उनके मस्तिष्क में अलगाववादी प्रवृत्ति को दूर करने हेतु सचेष्ट हो और उन्हें यह अनुभव करायें कि वे राष्ट्र की जीवनधारा के अंग है।

आरा गोलीकांड ?

परीक्षाओं में बढ़ता कदाचार

परीक्षा के समय बिहार में गोली कांड कोई नयी बात नहीं है। पर पिछले 4 जुलाई को आरा में हुआ गोली कांड अन्य गोली कांडो से भिन्न है। ऐसे गोली कांड चलाने के पूर्व जो परिस्थितियाँ उत्पन्न होती है वो परिस्थितियाँ वहाँ भी उत्पन्न हुई-यानि परीक्षा केन्द्रों पर छात्रों की भीड़ इकट्ठा होना, परीक्षा देने वालों के मदद हेतु कैम्पस में प्रवेश करना पुलिस द्वारा प्रवेश करने पर रोक लगाना-छात्रों द्वारा पुलिस पर पथराव करना एवं तोड़ फोड़ करना-पुलिस द्वारा अश्रुगैस, लाठी चार्ज और फिर गोली चलाना- भागते हुए छात्रों द्वारा बड़े पैमाने पर तोड़ फोड़ आगजनी की घटना-पुनः पुलिस द्वारा छात्रावासों में प्रवेश कर छात्रों को मारना तथा उनके सामानों को चुरा लेना-पुलिस द्वारा मरे छात्रों की संख्या कम बताना तथा छात्रों को झूठे मुकदमों में फंसाना-छात्रों द्वारा मरे हुए छात्रों की संख्या ज्यादा बताना-और फिर महाविद्यालय का अनिश्चित काल तक बन्द होजाना राजनैतिक दलों द्वारा धरना से लाभ उठाना और आन्दोलन तेज करने की घोषणा करना। ये हैं किसी भी प्रकार के गोली कांड की परिणति।

पर आरा गोली कांड कुछ इस मायने से भिन्न है क्योंकि इसकी पृष्ठभूमि बहुत पहले से तैयार की गयी थी। अतः घटना के पीछे की पृष्ठभूमि में जाना आवश्यक है।

बिहार में मगध विश्वविद्यालय परीक्षा में कदाचार के लिये तथा जातियता के लिए प्रमुख विश्वविद्यालय है। मगध विश्वविद्यालय के कुलपति डा० हरगोविन्द सिंह पद भार संभालते ही एक विशेष जाति के लोगों के अनेक महाविद्यालयों में प्राचार्य नियुक्त करने लगे। अन्य महाविद्यालयों में तो कम विरोध हुआ पर आरा का जैन महाविद्यालय जो एक विशेष जाति का गढ़ माना जाता है संगठित होकर विरोध करने का निर्णय किया। क्योंकि उस कॉलेज में उसके ही जाति के प्राचार्य थे, मुकदमें हुए और कोर्ट ने स्थगन आदेश द्वारा नये प्राचार्य को निर्णय न होने तक पदभार नहीं सम्भालने का निर्देश दिया। फलतः पुराने प्राचार्य तो प्राचार्य बने रहे पर विश्वविद्यालय ने नये प्राचार्य को 'परीक्षा अधिक्षक' नियुक्त किया।

फरवरी, 79 में विद्यार्थी परिषद् के द्वारा छेड़े गये शैक्षिक अराजकता के विरुद्ध संघर्ष का परिणाम यह निकल रहा था कि बिहार, मिथिला और भागलपुर विश्वविद्यालय में चोरी रोक दी गयी थी तथा अन्य विश्वविद्यालय के कुलपतियों पर भी शैक्षिक अराजकता दूर करने हेतु विद्यार्थी परिषद् द्वारा दबाव पड़ रहा था। मुंगल विश्वविद्यालय के छात्रों में भी यह भय बना हुआ था कि इस बार परीक्षा में कदाचार की छूट नहीं रहेगी। इसका लाभ उन जातिवादी नेताओं ने उठाना चाहा जिनका वर्चस्व जैन कॉलेज में था। उनके कतिपय जातिवादी छात्र नेता विभिन्न स्थानों पर बैठक लेकर आम छात्रों को चोरी करने हेतु प्रेरित कर रहे थे। 4 जुलाई के पूर्व एक जलूस भी निकाला गया कि' हमें परीक्षा में चोरी करनें की छूट मिले क्योंकि पिछले दो वर्षों से पढ़ाई नहीं हुई'। छात्रों को भड़काने के पीछे एक विधायक के भी हाथ होने की बात सुनी जा रही है। पुलिस पूरी तरह से वाकिफ थी कि छात्र चोरी करने हेतु संगठित हो रहे हैं। पर प्रशासन और परीक्षा अधीक्षक समझाने बुझाने के बदले बंदूक का ही सहारा लेना चाहते थे क्योंकि परीक्षा अधीक्षक' यह सोचते थे कि जो छात्र चोरी करने के पक्ष में बैठकें आयोजित कर रहे हैं वे प्राचार्य के जाति के हैं तथा स्थानीय पुलिस इन्सपेक्टर उनकी जाति के हैं। अतः वे पुलिस के बल पर उन छात्रों से निपटना चाहते थे।

फलतः 4 जुलाई को थोड़े बहुत दबाव के बावजूद अन्य परीक्षा केन्द्रों पर छूट देदी गयी। अन्य परीक्षा केन्द्रों पर इकट्ठे लोग संगठित होकर जब जैन कॉलेज आये तो पुलिस ने उन्हें रोका फिर आपस युद्ध प्रारम्भ हुआ। छात्रों के बीच में घुसे हुए कुछ असमाजिक तत्वों ने कैम्पस में बम भी फेंका-फिर घटना प्रारम्भ हुई।

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् की तीन सदस्य जांच समिति ने घटना स्थल का निरीक्षण करने के बाद अपने बयान में यह दावा किया कि मरने वालों की संख्या पुलिस द्वारा कथित "दो" से ज्यादा है तथा लगभग पचासों छात्र घायल हुए हैं।

अब निस्कर्ष यही निकलता है कि क्या इसी प्रकार प्राध्यापकीय गुटबाजी जातिवादी नेताओं के बहकावे में आकर छात्र अपना जीवन गवांते रहेंगे। आवश्यकता है ऐसे प्राध्यापकों, प्रशासन में बैठे लोगों एवं जातिवादी नेताओं के नकाब को उठाकर उन्हें दण्डित किया जाय तथा छात्र, प्राध्यापक, अभिभावक एवं प्रशासन में बैठे लोगों का एक "गोलमेज सम्मेलन" बुलाकर बिहार के छात्रों के माथे पर लगे इस कलंक को दूर किया जाय। विद्यार्थी परिषद् ने पहल की है और अपेक्षा करती है कि समाज का सभी वर्ग शैक्षिक वातावरण बनाने में सहयोग करेगा।

पाठ्यक्रम में भी विचारधारा की घुसपैठ

प० बंगाल में जून 1977 में वामपंथी मोर्चे के सत्ता में आने के बाद सभी विधि विधानों और नियमों को ताक पर रख कर प्राइमरी से विश्वविद्यालय स्तर तक मार्क्सवादी विचार धारा के लोगों को भरने की जी जान से कोशिश की जा रही है।

प० बंगाल सरकार द्वारा प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम निर्धारण हेतु बनायी गयी समिति ने अपनी दस दिन की बैठक के पश्चात् पाठ्य क्रम की विषय वस्तु की घोषणा की है। यह रिपोर्ट प० बंगाल सरकार के प्राथमिक शिक्षा डायरेक्टरेट के दस्तावेज के रूप में प्रकाशित की गयी। पाठ्यक्रम समिति जिसमें प्रमुख शिक्षाविद, स्कूलों तथा अन्य संस्थानों के प्रमुख शामिल थे, यह घोषणा कि की उनके द्वारा दिये गये सुझावों को तीन वर्ष के भीतर कार्यान्वित किया जाये। यह समिति किस प्रकार के पाठ प्रथम से छठी कक्षा में अध्ययन कर रहे छात्रों को पढ़ाना चाहती है। यह निम्न उदाहरणों से स्पष्ट है।

तीसरी कक्षा के लिये "वर्ग विभाजन" नामक पाठ में यह समझाने की कोशिश की गयी है कि कैसे समाज में (Paraitic class) का जन्म होता है। आगे कहा गया है कि अगर दूसरे के श्रम से अधिक उत्पादन होता है तो यह मालिक के लिये विशेष लाभदायक सिद्ध होता है। व्यक्तिगत लाभ अर्जित करने के लिये दूसरों का उपयोग ही शोषण कहलाता है। और इस प्रकार का अनुपयुक्त शोषण अभी भी समाज में चल रहा है। आगे एक और प्रश्न है कि सरकार क्या है? (और यह सब अध्ययन आठ वर्ष की आयु के कक्षा तीन में पढ़ने वाले छात्रों के लिए है) यहां पाठ्यक्रम समिति कहती है कि "गुलाम तथा अन्य दलित जातियां ही बहुधा विद्रोह करा करती हैं। विभिन्न प्रकार सामाजिक वर्गीकरण ही अनेक गड़बड़ी तथा झगड़े उत्पन्न करता है इन झगड़ों को दमन करने के लिये शासकवर्ग कानून बनाता है। पुलिस, फौज और अदालतों का गठन करता है। यह तन्त्र ही वह सब है जो कि सरकार कहलाता है।

पांचवी कक्षा के छात्रों को इतिहास विषय का परिचय कराते हुए पाठ्यक्रम समिति यह सुझाव देती है कि स्वतंत्रता क्या है? प्रजातंत्र क्या है? समानाधिकारों के लिये जागृति तथा विभिन्न देशों में इसके लिये आन्दोलन तथा विद्रोह, समानाधिकारों हेतु विश्व व्यापी आंदोलन, विश्वशांति की स्थापना, श्रमिक वर्ग की बहुतायत उनका जीवन तथा समाज को उनका योगदान।

अन्त में पाठ्यक्रम समिति ने कुछ महान व्यक्तियों जैसे राजा राममोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, मधुसूदन, रविन्द्र नाथ टैगोर रामकृष्ण परमहंस; विवेकानन्द; जगदीश चन्द्र बसु, गांधी जी तथा नेता जी सुभाष चन्द्र बोस आदि के जीवन को संक्षेप में अध्ययन की आवश्यकता पर बल दिया है। समाजवादी समाज के भविष्य स्तम्भों को गणित का ज्ञान किस प्रकार दिया जायेगा। गणित के माध्यम से महाजनों तथा कालाबाजारियों को आवरण विहीन किया जायेगा।

इस प्रकार का एक प्रश्न है। एक महाजन 100 रु० पर 1.50 पैसे प्रति माह की दर ब्याज लेता है। परन्तु सहकारी बैंक 100 रु० पर केवल 7.50 रु० वार्षिक दर से ब्याज लेता है। यदि एक दुर्भाग्यशाली किसान 300 रु० कर्ज लेता है। महाजन से तो एक वर्ष में उसे सरकारी बैंक की तुलना में महाजन को कितना अधिक ब्याज देना होगा।"

प्राथमिक कक्षा के छात्रों के लिये एक और प्रश्न है। "मणीपुर के किसानों ने सरकार के सहयोग से अपने गाँव में चावल का सहकारी स्टोर खोला हैं। माघ के महीने में अनवर अली को अपनी फसल का मूल्य 450 रु० प्रति क्विंटल वह अपनी फसल को बेचने की बजाय उसे सहकारी स्टोर में जमा करा देता है तथा 40 रु० प्रति क्विंटल की दर से कर्ज ले लेता है। आषाढ में वह उसी फसल को 62 रु० प्रति क्विंटल की दर से ब्याज देना पड़ता है तथा 7.50 प्रति क्विंटल किराया देना पड़ता है। बताओ अनवर अली को माघ में बेचने की बजाय फसल सहकारी स्टोर में रखने से कितना लाभ हुआ।"

छोटे-छोटे बच्चों को ब्याज, सहकारी समिति आदि अन्य पारिभाषिक शब्दों को समझने के लिये, जो कि गणित के माध्यम से पढ़ाये जा रहे हैं बहुत अधिक अतिरिक्त अध्ययन करना पड़ेगा। प्रश्न बहुत अधिक मुश्किल नहीं है परन्तु गणित का अध्ययन अधिक सरल हो सकेगा यदि इन कठिन शब्दों को गणित की पुस्तकों से दूर रखा जाये।

इस के परिपेक्ष में मनोविज्ञान के मर्म पर उंगली रखते हुऐ एक शिक्षाशास्त्री ने कहा है कि इन सिद्धांतों को बच्चो के अपरिपक्व मस्तिष्क तक पहुँचाने में बहुत अधिक हानिकारक है। उनका कहना कि इन सिद्धांतों की अपेक्षा बिना किसी विशेष पृष्ठभूमि के सिखना स्वतन्त्र विचारधारा का विकास करना छात्रों तथा रचनात्मक समाज के लिए बहुत अधिक उपयोगी है। परतु ऐसा लगता है कि पाठ्यक्रम समिति जो कि वामपंथी नेतृत्व की प्रेरणा के अन्तर्गत कार्य कर रही है योजनाबद्ध रूप से एक ऐसी प्राथमिक शिक्षा प्रणाली का विकास करना चाहती है जो कि मार्क्सवादी विचारधारा से रंगे हुऐ नवयुवकों का एक समूह तैयार कर सकें स्कूलों में राज्य के खर्च पर तैयार इस समूह से वामपंथी दल भविष्य में अपना समक्ष ढाँचा विकसित कर सके और निहित स्वार्थों कि पूर्ति कर सके।

राजनीति और नैतिकता

हाल ही में राष्ट्रीय राजनैतिक स्थितियों में हुए परिवर्तनों और घटना क्रम के कारण राजनीति में नैतिकता पर पड़े प्रश्न चिन्ह और भी गहरे हो गए हैं। जन-सामान्य का टूटा हुआ विश्वास चूर-चूर होकर बिखर सा गया है। किस पर विश्वास करें और किस पर नहीं इसका चयन ही असंभव सा होता जा रहा है। सत्ता की दौड़ में एक दूसरे को पीछे छोड़ जाने की भूख, कुर्सी हथियाने के लिए सिद्धान्तों को ताक पर रख समझौतावाद और इन सब पर टिकी दल-बदलुओं की सरकार की स्थापना एक दुःखदायी प्रसंग है। देश के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ा है जिसकी परिणति क्या होगी कहा नहीं जा सकता। लेकिन इतना जरूर है कि आम आदमी को यह समझने का अवसर मिला है कि सत्ता बदल जाना ही काफी नहीं है। यदि जीवन के सही मूल्यों की स्थापना करनी है तो समाज को ही परिवर्तित करना होगा। समाज की जागरूकता के बिना सत्ता के इस हाथी को बस में नहीं रखा जा सकता।

सरकार में आने के लिये श्री चरणसिंह और उनके साथियों ने पहली बार दल-बदल का सहारा नहीं लिया है। जिस थाली में खाते हैं उसी में छेद करने की रीत वे बहुत पहले से निभा रहे हैं। इस बार तो मामला अधिक गंभीर और अधिक पीड़ादायी है। श्री चरणसिंह ने अपने दल से ही नहीं देश के जन-मानस से विश्वासघात किया है। जनता ने पिछले चुनाव में उन्हें तानाशाही शक्तियों के विरुद्ध जेहाद छेड़ने के लिये सत्ता में बिठाया था। प्रधानमंत्री पद पाने के लिये तानाशाही शक्तियों के दामन तले बैठने की इजाजत उन्हें नहीं दी जा सकती। जनता पार्टी जन-आकांक्षाओं के प्रतीक से रूप में सत्ता में आई थी। जयप्रकाश जी के सपनों के आंदोलन की शुरुआत इसे करनी थी। पर में पद की लालसा ने इन भावनाओं के साथ सस्ता मजाक किया है।

देश के आम आदमी ने बड़ी आशा और विश्वास से ऐतिहासिक और क्रांतिकारी सत्ता परिवर्तन की भूमिका अदा की थी। समूचे विश्व के सामने लोकतंत्र में निष्ठा का अनूठा उदाहरण पेश किया था। श्री चरणसिंह ने श्रीमति गांधी के दल के सदस्यों की दया पर टिकी सरकार बना कर आम आदमी के इन भावनाओं पर कुठारा घात किया है।

इससे भी कहीं बढ़कर राजनीति में उच्च आदर्शों के संत महात्मा गांधी की आत्मा पर चोरी करने का अनैतिक काम भी हुआ है। बापू की समाधि पर, सरकार में आने बाद सभी संसद सदस्यों ने, एकता और सचाई की सौगंध खाई थी। इस झूठ के बल पर बनी सरकार जिसने एकता की शपथ को भी भंग किया है राष्ट्रपिता की पवित्र समाधि का उपहास करने की दोषी भी है।

इससे पहले भी श्री चरणसिंह और उनके साथियों ने अपने विश्वास पर संदेह किये जाने के खुले अवसर दिये थे। जब श्री देसाई ने दोहरी निष्ठा और मंत्रिमण्डल में गैर जिमेदाराना रवैया अपनाने के बाद उन्हें मंत्रिमण्डल से निकाल दिया था। तभी से उससे कहीं पहले से षड्यंत्र के बीज बोये जा चुके थे। श्रीमति गांधी को गिरफ्तार न करने की परिस्थितियाँ बनाने का आरोप लगाते हुए उन्होंने अपने ही साथियों को नपुसक कह दिया था। कि बाद में यह भी साफ हो गया था चौधरी साहब बार-बार सरकार में शामिल न होने की बात कह कर सिर्फ अपना भाव बढ़ा रहे थे। उस उप-प्रधानमंत्री बनने के लिए सभी प्रकार के दबावों का इस्तेमाल करने वाले आज ईमानदार सरकार देने का दावा कर रहे हैं।

यह बात अब तक बिल्कुल साफ हो चुकी है कि श्री चरणसिंह मुंह से जो कहते हैं उसका उल्टा करते हैं। जब सरकार में शामिल नहीं होने की बात कहते हैं तो उसके पीछे सौदेबाजी छिपी रहती है। या फिर श्री राजनारायण से संबंध तोड़ने की बात सार्वजनिक तौर पर कहते हैं तो उसके पीछे धोखाधड़ी और विश्वासघात छिपा रहता है। प्रश्न यह है कि क्या इस सब को 'राजनीति में चलता है— यह कह कर भुला दिया जा सकता है अथवा अनैतिकता के नए कीर्तिमान इसमें से बनते देखे जा सकते है।

पिछले एक वर्ष में श्री देसाई व उनके सहयोगियों को बदनाम करने का एक सुनियोजित प्रयास एक व्यक्ति के जीवन की इच्छा पूरी करने के लिये चला है ऐसा लगने लगता है। पहले श्री जगजीवन राम के पुत्र के मामले को लेकर चरित्र-हनन जैसे घिनौने अस्त्र का इस्तेमाल किया गया। इसमें श्री राजनारायण सिंह जब अश्लील जन रुचि पैदा कर राजनीतिक लाभ नहीं पा सके तो श्री कांति देसाई पर आरोप लगा कर तत्कालीन प्रधानमंत्री को उखाड़ने की कोशिश की गई। इस मामले में श्री देसाई की दृढ़ता और आत्म-विश्वास को देख कर श्री चरणसिंह के पिछलग्गुओं ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का हौआ खड़ा करने का प्रयास किया। बात में दो राय नहीं हो सकती कि संघ से संबंधित मंत्रियों ने परिश्रम और ईमानदारी के बल पर अपूर्व प्रतिष्ठा और सम्मान अर्जित किया है। श्री राजनारायण जानते थे कि मंत्री तो क्या संघ से संस्कार पाए हुए किसी संसद-सदस्य पर भी भ्रष्टाचार या ऐसा ही कोई आरोप सिद्ध कर पाना संभव नहीं है। दूसरी ओर इनके अपने समर्थकों द्वारा संचालित राज्यों में सांप्रदायिक दंगों, हरिजनों पर अत्याचारों और बढ़ते हुए असंतोष के समाचार लगातार दिला रहे थे। श्री राजनारायण इन असफलताओं से बौखला कर जब हताश हो चुके हो तो उन्होंने संघ को निशाना बनाया। श्री चरणसिंह गृहमंत्री के रूप में बुरी तरह असफलता सिद्ध होकर निकाले जाने के बाद जोड़-तोड़ की राजनीति में लगे। उनके उप-प्रधानमंत्री बनने के बाद पद की गरिमा और जिम्मेदारी को ताक पर

रख करउन्होंने सरकार को भीतर से तोड़ने का मोर्चा संभाला। श्री राजनारायण ने संघ पर सांप्रदायिक होने का शोर मचाया उन्हें यह याद नहीं रहा कि उनके नेता चौधरी साहब का उर्दू के विषय में क्या रवैया है। उन्होंने राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ के सदस्यों की दोहरी सदस्यता का सवाल उठाया तो यह भूल गए कि वे खुद किसान-सम्मेलन के रूप में दोहरी-सदस्यता शुरू करने के दोषी है। कुल मिला कर जनता-पार्टी, में रहते हुए भी उसके प्रति दुर्भावना और अब में श्री चरण सिंह को प्रधानमंत्री बनाने का ध्येय रख कर बाहर और भीतर से जनता की धरोहर को लूटने का काम चलता रहा। राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के बार-बार दिये गए स्पष्टीकरण और संबंध सामान्य करने के प्रयास सत्ता के लालचियों के पूर्वाग्रह को तोड़ नहीं पाए।

यह घटना चक पीठ में छुरा घोपने की तैयारी मात्र थी। मौका पाते ही अवसर वादियों ने पीछे से वार किया। इसके अलावा कुछ और करने का दम भी उनमें नहीं था। मुंह में राम और बंगल में छुरी रखने वाले दल बदल सिंह जिस दिन प्रधानमंत्री बने उसी दिन से उनकी अपनी थाली में भी छेद होना शुरू हो गया। श्री जार्ज फर्नांडिस जैसे नेता भी इस बहाव से बच नहीं पाए। एक ओर से इस बात पर आश्चर्य व्यक्त किया ही जा रहा था कि केवल कुछ घंटे पहले देश के सर्वोच्च प्रति निधियों के सामने संसद के हॉल में जो आवाज श्री देसाई की सहराना और सरकार के समर्थन में बोल रही थी वह अचानक बदल कर खुली आलोचना में कैसे बदल गई? इस बात पर भरोसा करना कठिन लग रहा था कि आपातकाल में घोर यातनाओं के शिकार होने वाले परिवार के सदस्य, चिकमंगलूर में स्नेहलता रेड्डी मौत का अवाब माँगने वाले जार्ज, श्रीमति गांधी की तानशाही के जाल में डायनामाइट का पलीता लगाने वाले सिपह सालार—उन लोगों से हाथ मिला लेंगे जो सरकार बनाने के लिए तानाशाही शक्तियों की प्रतीक श्रीमति गांधी से सहायता की भीख माँग रहे हैं। लेकिन ऐसा हुआ।

इस सबके बावजूद नैतिकता और सिद्धांत वादिता की लाज रखने लिए श्री देसाई दृढ़ रहे। राष्ट्रपति को दी गई सूची में शामिल कुछ नामों की असत्यता की नैतिक जिम्मेदारी उन्होंने अपने ऊपर ली। यह नाम उनके द्वारा नहीं जोड़े गए थे तो भी पश्चाताप स्वरूप राजनैतिक जीवन से सन्यास लेकर महानता का आदर्श समाज के सामने रखा है। श्री मोरारजी देसाई के ढाई वर्षों के प्रशासन की उपलब्धियों की चर्चा अब होने लगी है। पर उनकी दृढ़ता, निस्वार्थ चरित्र और बेदाग जीवन की बातें की जा रही हैं। राष्ट्रपति ने राजनैतिक अल्पसंख्यकों को सरकार बनाने का अवसर देकर विश्व के लोकतांत्रिक इतिहास में नया पृष्ठ जोड़ दिया है। श्री नीलम संजीव रेड्डी के इस मत से असहमति होते हुए भी श्री देसाई ने इसे गरिमा के साथ स्वीकार किया है। सोचना यह है कि जनता की भावनाओं का आदर करने वालों के मुकाबले जन-मानस की आशाओं से विश्वासघात करने वालों की सरकार बनी है। क्या यही अनैतिकता हमारी राजनीति का मूल चरित्र तो नहीं बन जाएगी क्या अनैतिक आचरण के सिवा राजनीति में में कुछ ही नहीं? या फिर यह जो यथास्थिति वाद बना है इसे तोड़ने के लिए आवाज उठेगी और इस प्रपंच का झंडा फोड़ होगा।

यह समझना पड़ेगा कि जनता की इच्छा का अनादर हमारी मूल संस्कृति पर आधारित राजनीति का चरित्र नहीं है। जन-सामान्य की पीड़ा के आंसुओं में शासन को बहते हमने देखा है। राज धर्म की उत्तम स्थिति का वर्णन करते हुए कालिदास ने कहा है। "तू अपने सुख की परवाह न करके लोकहित के लिये प्रतिदेव कष्ट उठा—तेरी वृत्ति (पेशा) ही यही है।" यह मानना होगा कि पिछली राज-नीति और लोकनीति के संघर्ष से प्रकाश की किरण कटेगी। महाभारत के संघर्ष से 'गीता' जैसा अमर शास्त्र मिलता है। सागर-मथन से ही अमृत-रस प्राप्त हो सकता है। महा-भारत के नरसंहार को अपने भीतर आत्म सात् कर ले। जरूरत है उस ताकत की तो मंत्रय से निकलने वाले विष को अपने कंठ में स्थान दे भारतीय राजनीति के मार्ग में जो काली आपत्तियां आकर समान को आलोकित होने से रोक रही हैं उनका निराकरण अवश्यंभावी है।

—रजत शर्मा

परीक्षा पद्धति में सुधार

पृष्ठ १५ का शेष)

प्रतिभा का सन्तुलित मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त 70 से अधिक विश्वविद्यालयों में ग्रेडिंग सिस्टम के द्वारा समस्या का समाधान करने का प्रयास किया गया है। परन्तु बाहरी परीक्षा का कोई ऐसा विकल्प नहीं मिल सका है। जिसके द्वारा इतनी बड़ी मात्रा में छात्रों की मानसिक एवं शैक्षाणिक शक्ति का मूल्यांकन किया जा सके। पाश्चात्य देशों में अतिरिक्त वर्ष के अन्त में बाहरी परीक्षा का होता बहुत से विश्व-विद्यालयों तथा स्कूलों में अनिवार्य है?

परन्तु विदेशों की परीक्षा पद्धति की प्रामाणिकता पर संदेह की दृष्टि से नहीं देखा जाता है क्योंकि शिक्षक एवं छात्र परीक्षा को दोनों की प्रतिभा आंकने के साधन मानते हैं। परन्तु भारत में परीक्षा तो केवल ढकोसला है जिसके द्वारा छात्र केवल डिग्री प्राप्त करना चाहता है और प्राध्यापक अपने मासिक आय में वृद्धि। परीक्षा के प्रति इस प्रकार के व्यापा-रिक दृष्टिकोण के होते हुए पद्धति में किसी भी प्रकार का सुधार नहीं हो सकता परीक्षाओं पर प्रतिवर्ष खर्च होने वाले 100 करोड़ रुपये की रकम इस प्रकार की पद्धति को बनाये रखने के लिए एक बहुत बड़ी प्रेरणा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की रिपोर्ट के अनुसार "परीक्षा से सम्बन्धित तमाम बोर्डों में ऐसे वरिष्ठ लोगों का बहुमत है जो परीक्षा से अधिक मात्रा में धन कमाते है और ऐसे लोगों से किसी प्रकार के सुधार की अपेक्षा नहीं की जा सकती है।"

परन्तु भारत में जिस भीमकाय शैक्षिक समाज का गठन हो चुका है उसमें सुधार करना वर्तमान प्रशासनिक एवं राजनैनिक शक्ति के बाहर है परीक्षा पद्धति को समाप्त नहीं किया जा सकता है परन्तु अगर इस पद्धति को ऐसा बना दिया जाय जिसमें छात्र एवं शिक्षक इसको अपने 2 स्वार्थों को पूरा करने का साधन न बना सके तो परीक्षा पद्धति की गरिमा को दोबारा लाया जा सकता है। जिन लोगों ने इसमें सुधार लाना है उनके लिये नारेबाजी और राजनीति शिक्षा से अधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षा क्षेत्र में पनपता 'ट्रेड युनिइनिज्म' शिक्षा को समाप्त करने के लिए काफी तेजी से सफलता की ओर अग्रसर हो रहा है।

हलचल

उ० प्र० में सेकण्डरी शिक्षा के राष्ट्रीयकरण पर पुनर्विचार

उत्तर प्रदेश सरकार सेकण्डरी शिक्षा के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी प्रस्ताव पर पुनर्विचार कर रही है। उक्त घोषणा करते हुए प्रदेश के सेकण्डरी शिक्षा मंत्री कैलाश नाथ सिंह ने बताया कि प्रदेश सरकार उच्चाधिकार प्राप्त की उस रिपोर्ट पर विचार कर रही है, जिसमें सेकण्डरी शिक्षा के राष्ट्रीयकरण अथवा इसको किसी स्वायत्तशासी निगम के द्वारा नियंत्रित किए जाने का प्रावधान है। उन्होंने बताया कि प्रदेश में सेकण्डरी शिक्षा के राष्ट्रीय करण करने में सरकार के सम्मुख कोई बाधा नहीं है।

विश्वविद्यालयों के विरुद्ध जाँच का आदेश

उत्तर प्रदेश सरकार ने प्रदेश के तीन विश्वविद्यालयों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों अधिकारों के दुरुपयोग व नियुक्तियों के मामले में प्रभाव का उपयोग करने के आरोपों की पूर्ण जाँच हेतु आज्ञा जारी की है। प्रदेश के उच्च शिक्षा मंत्री के अनुसार अवध विश्वविद्यालय की जाँच रिपोर्ट अगले महीने तक पूर्ण हो जायेगी और इलाहाबाद विश्वविद्यालय तथा गोरखपुर विश्वविद्यालयों से सम्बन्धित जाच रिपोर्ट भी अगले तीन मास में उपलब्ध होगी। विश्वविद्यालय के शैक्षणिक सत्रों को नियमित करने का प्रयास सरकार द्वारा हो रहा है व इस सम्बन्ध में सभी विश्वविद्यालयों व सम्बद्ध विद्यालयों को पत्रक जारी कर दिये गये हैं, जिसके निर्देशों की अवहेलना के परिणामस्वरूप सम्बन्धित संस्थाओं को सरकारी वित्तिय सहायता व अन्य सुविधाओं से वंचित कर दिया जाएगा।

मंत्री महोदय ने इस बात पर सन्तोष व्यक्त किया कि प्रायः सभी संस्थानों ने सरकारी अपील को महत्व प्रदान किया है तथा अध्ययन व परीक्षाओं में होने वाली गड़बड़ व समाज विरोधी तत्वों को चेतावनी देते हुए कहा है कि ऐसी किसी भी घटना को नजर अन्दाज नहीं किया जाएगा और प्रशासन इसके विरुद्ध कड़ी कार्यवाई करेगा।

कुलपति हरद्वारी लाल को बर्खास्त करने की मांग

केन्द्र में सत्ता परिवर्तन के पश्चात् रोहतक के महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय में विश्वविद्यालय प्रशासन के विरुद्ध आन्दोलन करने वाले संगठनों का उत्साह बढ़ा है। वे अब विश्वविद्यालय के कुलपति हरद्वारी लाल, जाता है, को हटाने के लिए पुनः आन्दोलन की शुरूआत कर चुके हैं। आन्दोलन के लक्षण विश्वविद्यालय परिसर की दीवारों पर लिखे गए नारों व छात्रों, अध्यापकों तथा मन्त्रिमण्डलीय कर्मचारियों के विभिन्न समूहों द्वारा लगाए गए पोस्टरों से लक्षित होते हैं। विश्वविद्यालय से सम्बन्धित इन तीनों समूहों की माँगों में कुलपति हरद्वारी लाल को गैर-विद्वत और अधिनायकवादी रवैया मुख्य मुद्दा है।

छात्रों ने कुलपति हरद्वारी लाल को निलम्बित किए जाने की मांग के साथ-साथ विश्वविद्यालय की विभिन्न समितियों का लोकतान्त्रीकरण करने व उनमें छात्रों के प्रतिनिधित्व की मांग भी की है जबकि अध्यापकों ने महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय प्राध्यापक संघ के अध्यक्ष और अन्य निलम्बित प्राध्यापकों को पुनः बापस लेने की बात रखी है। तीसरी ओर सम्बन्धित मंत्रिमण्डलीय कर्मचारी कुलपति द्वारा आंतक का वातावरण बनाए जाने पर शेष प्रकट कर रहे हैं।

मध्य प्रदेश में विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों की पुर्नयोजना

मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों की समन्वय समिति की गत 23 जुलाई को भोपाल में हुई बैठक में निर्णय लिया गया कि प्रदेश के सभी विश्वविद्यालयों के वर्तमान शैक्षणिक सत्र की परीक्षाएँ मार्च 1980 के तीसरे सप्ताह से प्रारम्भ होंगी। इन परीक्षाओं का तिथि क्रम 15 अगस्त से पूर्व तैयार कर विद्यार्थियों को बता दिया जाएगा। समन्वय समिति ने विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों को सामाजिक प्रासंगिकता केन्द्रों में परिवर्तित करने हेतु विभिन्न विश्वविद्यालयों में शैक्षणिक स्तर व चुने हुए विषयों पर शोधों के लिए आवश्यक सुधार व विकास पर बल दिया है। समिति ने विश्वविद्यालयों से पुस्तकालय सम्बन्धी छात्रों को होने वाली असुविधा के विषय में भी जवाब माँगा है।

उक्त बैठक में इस बात का निर्णय भी लिया गया कि विश्वविद्यालय प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु विशेष कक्षाएं आयोजित करें और समिति इस बात पर सहमत हो गई है कि प्राध्यापकों व प्रवक्ताओं की विद्वत्ता का नियमित रिकार्ड रखा जायगा और सभी विश्वविद्यालयों के प्रत्येक केन्द्रों पर "प्रतिभा संग्रहक (रजिस्टर)" तैयार किया जाएगा जिसमें उच्च विद्वत श्रेणी व अध्यापकों द्वारा प्राप्त की गई जानकारियों आदि सम्मिलित रहेगा। इस सारे प्रयोजन का उद्देश्य विशेष व चुने हुए पाठ्यक्रमों हेतु सुयोग्य अध्यापकों का चयन करना है, ऐसा बताया जाता है।

उड़ीसा में ३८ नए कालेज खुलेंगे

गत 21 जुलाई को उड़ीसा मंत्रिमण्डल ने राज्य में नए कालेजों की स्थापना के लिए गठित बामा दास समिति की सिफारिशों को अपनी सहमति प्रदान कर दी है। मंत्रिमण्डल ने इसको वास्तविक आवश्यकता महसूस करते हुए अगले चार वर्षों में सम्पूर्ण राज्य के अन्दर 38 नए कालेज स्थापित करने का निर्णय लिया है। इनमें 4 महिला कालेज 9 स्नातक कालेज और 25 जूनियर कालेज 9 स्नातक कालिज, जोकि इण्टरमीडियेट स्तर तक हैं, खुलेंगे। चारों महिला कालेज प्रदेश के पिछड़े जिलों सुन्दरगढ़, कलहन्दी, कन्धार व कोरापुर में स्थापित किये जाएँगे। ये सरकारी कालेज होंगे तथा बाद में महिला छात्राओं पर

निर्भर रहेंगे। फुलवनी जो प्रान्त का सर्वाधिक पिछड़ा जिला है में एक भी महिला कालिज नहीं है जबकि वहां पर बहु संख्या में महिला छात्राएँ हैं।

नौ स्नातक कालेज प्रदेश के ऐसे नौ उप-मण्डलों में स्थापित किए जाएँगे जहाँ पर कोई कालेज नहीं है और 25 जूनियर कालेज मुख्यता पिछड़े हुए क्षेत्रों में खोले जाएँगे इन सभी 38 कालेजों की स्थापना हेतु स्थानों का निर्णय समिति करेगी तथा उनका विकास सम्बन्धी कार्य भी समिति के अधिकार में रहेगा।

इन सभी कालेजों को वित्तिय सहायता स्थापना के पाँच वर्ष पश्चात् प्रारम्भ की जाएगी यह एक तिहाई तक रहेगी जो सात वर्षों में दो-तिहाई होगी तथा पूर्ण सहायता दस वर्षों में दी जाएगी किन्तु पिछड़े क्षेत्रों में यह क्रमशः तीन, पाँच व सात वर्ष रहेगी।

ज्ञात रहे कि उपरोक्त एक सदस्यीय समिति का गठन राज्य सरकार द्वारा राज्य में विशेषतया पिछड़े क्षेत्रों में नए कालेजों की स्थापना की सम्भावनाओं का परीक्षण करने हेतु किया गया था।

जिला मजिस्ट्रेट की पत्नी नकल करते हुए पकड़ी गई

मुरादाबाद से प्राप्त समाचारों के अनुसार जिला मजिस्ट्रेट की पत्नी परीक्षाओं में "अनुचित साधनों" का प्रयोग करते हुए विश्वविद्यालय के विशेष दस्ते द्वारा पकड़ी गई। स्थानीय हिन्दू कालेज के परीक्षा केन्द्र पर हो रही परीक्षाओं में उक्त 'महत्वपूर्ण' परीक्षार्थी को "अनुचित साधनों' के प्रयोग को रोकने के लिए निरीक्षकों द्वारा किसी भी प्रकार की कार्यवाई नहीं की गई। छात्रों द्वारा उक्त घटना की रिपोर्ट कालेज अधिकारियों को करने पर जब कोई कदम नहीं उठाया गया तब उन्होंने विश्वविद्यालय के नकल विरोधी दस्ते को सूचना दी।

मद्रास में कालेज छात्राओं का प्रदर्शन

लगभग 2000 से भी अधिक एक स्थानीय महिला कालेज की छात्राओं ने कालेज प्रबन्धकों द्वारा "बर्दी" पहनने की बात को लेकर उक्त प्रदर्शन किया। यह पहला अवसर था कि ऐसे मुद्दे पर मद्रास शहर में छात्राओं का जलूस निकला सभी युवा छात्राओं ने दो घंटे तक कालेज प्रबन्धकों के विरुद्ध लगातार नारेबाजी की। उनके हाथों व कालेज की दीवारों पर "हम जेल के पक्षी नहीं हैं" नारे लिखे हुए थे। उक्त कालेज साउथ इण्डियन एजूकेशनल ट्रस्ट द्वारा संचालित होता है।

पटना विश्वविद्यालय में छात्रों द्वारा तालेबन्दी

पटना विश्वविद्यालय के एम० ए० के परीक्षार्थियों द्वारा परीक्षाओं की तिथि को बढ़ाने की मांग लेकर विश्वविद्यालय कार्यालय पर ताला लगा दिया। प्रदर्शनकारी छात्रों ने विश्वविद्यालय के कर्मचारियों को जबरदस्ती भाग दिया। दूसरी ओर पटना मेडिकल कालेज के चतुर्थ वर्ष के छात्रों ने एम०बी०बी० एस० (द्वितीय) की परीक्षाओं की तिथि घोषित किए जाने की मांग को लेकर प्रधानाचार्य व कार्यालय पर तालाबन्दी कर दी।

इस बीच पटना विश्वविद्यालय प्राध्यापक संघ ने 7 अगस्त की अपनी विशेष बैठक में परीक्षाओं का बहिष्कार करने का निर्णय लिया है, इसके पीछे परीक्षाओं में अराजकता का कारण बताया जाता है। संघ 17 अगस्त को मुख्यमंत्री के निवास पर इस अराजकता के विरुद्ध प्रदर्शन करेगा।

कश्मीर में वि० वि० परीक्षाएं स्थगित

जम्मू-कश्मीर विश्वविद्यालय की वार्षिक परीक्षाएं अगले वर्ष मार्च तक के लिए स्थगित कर दी गयी है।

ज्ञातव्य है कि जम्मूकश्मीर के दोनों विश्वविद्यालयों के एक हजार गैर-शिक्षक कर्मचारी वेतनमानों में संशोधन और अधिक सुविधाओं की मांग को लेकर पिछले दो सप्ताह से पूर्ण हड़ताल पर हैं।

विश्वविद्यालय के प्रवक्ता के अनुसार अंदियों में परीक्षायें आयोजित कर पाना ससंभव होता इसलिए परीक्षायें मार्च में होंगी।

नकल रोकने पर अध्यापकों की पिटाई

मुरादाबाद-जनपद में चल रही विश्वविद्यालयी परीक्षाओं में परिक्षार्थियों को नकल न करने देने पर अब तक आधा दर्जन से अधिक अध्यापकों को पीटा जा चुका है और 16 छात्र बन्दी बनाकर जेल भेजे जा चुके हैं।

मुरादाबाद जिले में परीक्षाओं की स्थिति के सम्बन्ध में उक्त जानकारी देते हुए अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक ने बताया कि परीक्षाओं के प्रथम दिन स्थानीय हिन्दू कालेज में लगभग तीन दर्जन छात्रों को नकल करते हुए पकड़ा गया। इस पर क्रुद्ध होकर कुछ छात्रों ने प्राधानाचार्य पर घातक आक्रमण किया।

उत्तर पुस्तिकाएं चपरासी की गलती से छूट गई थीं

दिल्ली विश्वविद्यालय ने जून 7 और 9 को हुई एम. बी. बी. एस. प्रवेश परीक्षा में दौलत राम केन्द्र पर 67 उत्तर पुस्तिकाएं छूट जाने की घटना के सम्बन्ध में अपनी जांच पूरी कर ली है।

विश्वविद्यालय के कार्यकारी कुलपति और दक्षिण परिसर के निदेशक प्रो. के. बी. रोहतगी के अनुसार जांच करने पर पता चला है कि ये उत्तर पुस्तिकाएँ एक चपरासी की गलती के कारण छूट गई थी जिन्हें अगले दिन विश्वविद्यालय की परीक्षा शाखा को सौंप दिया गया था।

अस्थायी शिक्षकों की सेवायें नियमित न करने की आलोचना

दिल्ली विश्वविद्यालय शिक्षक संघ ने कुछ कालेजों द्वारा अभी तक अस्थाई शिक्षकों की सेवाएं नियमित न किए जाने की कड़ी आलोचना की है।

शिक्षक संघ के अध्यक्ष श्री ओ. पी. कोहली ने विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. मेहरोत्रा को एक पत्र लिखकर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के इस निर्णय की ओर ध्यान दिलाया है कि 1 जुलाई 1979 तक स्थाई कर दिए गए शिक्षकों के अनुसार ही कालेज को दी जाने वाली अनुदान राशि निर्धारित की जाएगी।

कविता

भ्रम

कुछ देशी मुर्गियों को यह भ्रम हो गया है,
कि, उनके फूटने पर,
नए अधिकारों का जन्म होगा।
जबकि धाराओं के धागे में बंधी,
उनकी चोंच के बीच कैद,
अंहकार केंचुए की तरह दम तोड़ रहा है।
और वे गुम-सुम सी,
बाहर की सरगर्मियों से बेखबर,
अपने भीतर की सारी गर्मी
उन अंडो में भर देना चाहती है,
क्योंकि देशी मुर्गियों को.....
मैंने सुना है,
कुछ लोगों को जख्म
पालकर रखने में मजा आता है,
हालांकि, देशी मुर्गियों को जख्म पालने की
फुर्सत नहीं है,
पर वे इस काम में माहिर हैं,
क्योंकि यहां जख्म पालना तो एक रस्म है,
और रस्म तो हर तरह से निभाई जाती है,
कटघरे में खड़े चश्मदीद गवाह की तरह
मुशायरे में हो रही वाह-वाह की तरह
या फिर उन कब्रगाहों की तरह
जिनके आगे, एक-एक गाँव का नाम जुड़ा है
क्योंकि देशी मुर्गियों को.....
इन मुर्गियों के दड़बे,
उन टूटे साइन बोर्डों से घिरे हैं,
जिन पर हुआ था कभी
परिवार-नियोजन का प्रचार,
और अंडों की बढ़ती संख्या ने,
जिसे निरर्थक कर दिया था।
मैंने इनकी आँखों में तैरते सपनों के पीछे,
उस दिन की धुंधली पड़ती परछाई को देखा है,
जब दिन-दहाड़े उनके अधिकारों की
हत्याकर दी गई,
और उनकी आत्मा की आवाज भी
स्वर्णमण्डित विस्फोट में खो गई।
विस्फोट में क्षत-विक्षत हुई
आदम हड्डियों की तरह,
और उन टिड्डियों की तरह
जो जमात में चलते हुए भी,
बारत की तरह शोर नहीं करती,
जबकि जमात में न होते हुए भी,
देशी मुर्गियां दिन रात तपस्या करती हैं,
क्योंकि देशी मुर्गियों को यह भ्रम हो गया है,
कि उनके फूटने पर
नए अधिकारों का जन्म होगा।

विभा वशिष्ठ

सच

तुमने कहा था,
सच बोलो,
और मैंने,
जोर देकर सच बोला।
पर मेरे सच बोलते ही,
तुम न जाने कहां चले गए,
शायद अब, उत्सुक हो यह जानने के लिए कि
फिर क्या हुआ ?
तुम्हारे यूं खिसक जाने के बाद,
मुझे चारों ओर से,
खूंखार भेड़ियों ने घेर लिया,
और कहा,
सच बोलना है,
तो यहां बोलो,
जहां सिर्फ तुम ही अपनी आवाज को सुन सकते हो।
और सच ही बोलना है,
तो, सिर्फ संसद का सच बोलो,
सड़क का सच नहीं,
क्योंकि संसद का सच तुम्हें,
महान् नेता बना देगा,
जबकि सड़क का सच
जबर्दस्ती तुम्हें,
किसी गैस-चैम्बर में ठूंस देगा,
मैंने फिर तुम्हें तलाश किया,
और पाया,
कि तुम भी उन्हीं भेड़ियों में शामिल हो गए हो।

विभा वशिष्ठ

सबके लिए

मेरी भीगी हुई आँखों में
वक्त-बेवक्त फैल जाता है
करोड़ों पीले चेहरों का उदास समन्दर
(और) उनींदी-चेतना को अपने में भर लेता है
डूबो लेता है—आकंठ.....
कोई एक सपना है
जो बार-बार द्वार पर दस्तक देकर भी
हर बार भीतर आने से मना कर देता है...
कदमों की आहट
(जो रास्ते में छूट जाती है)
हर बार कुचल जाती है—स्वागत में बिछाई
गई गुलाब की पंखुरियों को
एक अधूरा ख्याल है—
जो मूर्त्त होते-होते रह जाता है
गीली माटी के एक लौंदे को
मैं दे देना चाहता हूँ अपने स्वप्न की शक्ल
जमीन के फलक पर उतार देना चाहता हूँ—
आकाश के विराट चेहरे के चित्र
पर—
मूर्ति बेढंगी हो जाती है
और चित्र बदरंग
पर—बेढंगी बदरंग जिन्दगी से भी प्यार करता हूँ...
अभी पराजित नहीं हुआ हूँ मैं
अभी स्थगित नहीं हुई है जिंदगी को बेहतर बनाने की कोशिशें
...जिन्दगी को मेहमान की तरह नहीं
दुल्हन की तरह
ले आना चाहता हूँ अपने घर में
...चेहरों का समन्दर
बदल गया है अब एक विराट तरल चेहरे में
(और) मैं समन्दर को
बूंद-बूंद तोड़कर नहीं
जोड़कर महसूस करना चाहता हूँ
—उसकी तन्मय गहराई से मोती उगते हैं...
जिन्दगी की दुल्हन को
मैं लाद देना चाहता हूँ उन मोतियों से
ताकि—द्वार पर दस्तक देता सपना
भीतर आ जाए
औरबेढंगी-बदरंग जमीन पर खींचा जा सके—
आकाश के विराट चेहरे का चित्र...
...आकाश सबका है
जमीन सबकी है
और मेरे मन में मूर्त्त होता ख्याल
वह भी—सबका और सबके लिए...

हरजेन्द्र चौधरी

भारत में विदेशी मिशनरी

भारत में आजकल छह हजार से अधिक मिशनरी कार्यरत हैं। इनमें से प्रायः आधे कैथोलिक हैं, और आधे प्रोटेस्टेन्ट। ये विदेशी मिशनरी देश की सुरक्षा के लिए तो एक बड़ा खतरा है ही, राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया में भी बाधक बनते हैं। इसके अलावा, ये भारतीय ईसाईयत के लिए एक अपमानजनक प्रतीक भी बन गए हैं।

ईसा ने अपने शिष्यों को उपदेश दिया था कि वे सारे विश्व के लोगों के पास जाकर उन्हें ईसा के धर्मोपदेश सुनाएं, और अपना शिष्य बनाएं। अपने शिष्यों से ईसा ने स्वयं कहा था कि उनके महानतम धर्मदेश-परमेश्वर को प्यार करने के साथ-साथ, अपने पड़ोसियों को अपने समान प्यार करने में सब धार्मिक नियमों और पैगम्बरों की वाणी समाहित है। इस धर्मोपदेश का प्रचार लोगों में कैसे किया जाये, इसका उदाहरण भी स्वयं ईसा ने अपने शिष्यों के सामने प्रस्तुत किया था। वह प्रचार वे सादगी, विवेक और निःस्वार्थपूर्ण समर्पण की भावना के साथ करते थे। धर्मप्रचार का सार उनके लेख में यह था : **धर्म-प्रचारक लोगों के बीच ऐसे जाए, जैसे भेड़ें भेड़ियों के बीच जाती हैं। धर्म-प्रचारकों को लोगों की मान्यताओं और परम्पराओं का आदर करना चाहिए, तथा उनके किसी रीति-रिवाज को नष्ट नहीं करना चाहिए, बल्कि 'अपने आचरण में परमेश्वर को प्यार करने के साथ-साथ, अपने सब पड़ोसियों को अपने समान प्यार करो' इस महान धर्मोपदेश की सही व्याख्या को आत्मसात कर उसका पालन करना चाहिए।**

धर्म प्रचार की यह शैली ईसाई धर्म-प्रचारकों ने पहले अपनायी। भारत में इसी शैली को अपनाकर, सुसमाचार का प्रचार सेंट थॉमस ने, जो ईसा के बारह पट्टशिष्यों में से एक थे, किया था। उन्होंने भारत में सुसमाचार का प्रचार बिना भारतीयों पर कोई आर्थिक, राजनैतिक या सांस्कृतिक प्रभुत्व दिखाये किया और उनकी संस्कृति में कोई परिवर्तन किए बिना, शिष्य बनाए और गिरजाघरों की स्थापना की।

परन्तु, ईसाई-धर्म प्रचार की इस आदर्श शैली को उन मिशनरियों ने कतई नहीं अपनाया, जो औपनिवेशिक सत्ताओं के संरक्षण या उसकी सुरक्षा के पात्र बनकर आये। वे दुहरे उद्देश्य के साथ भारत आये थे। और यह दोहरा उद्देश्य था—भारत में ईसाई धर्म और अपने साम्राज्य की स्थापना करना।

दुर्भाग्य से ऐसे कुछ पोप भी थे, जिन्होंने नेकनीयती से, और उन दिनों की मनोवृत्ति को ध्यान में रखते हुए, ईसाई राजाओं और औपनिवेशिक सत्ताओं को यह अधिकार प्रदान किया कि गैर-ईसाई देशों पर आक्रमण करने, उनसे युद्ध करने, उन्हें जीत और अधीन कर उनके लोगों को सदा के लिए अपना दास बनाकर, उनके साम्राज्यों तथा उनकी सम्पत्ति पर पूरा अधिकार करने के लिए स्वतंत्र हैं। (पुर्तगाल के राजा एल्फोन्सस प्रथम को 18 जून, 1452 को पोप निकोल्स पंचम द्वारा दिया गया आदेशपत्र।)

यह कोई प्रशंसनीय बात नहीं थी कि औपनिवेशक सत्ताओं के संरक्षण में विदेशों में जाने वाले अनेक मिशनरी इस दोहरे उद्देश्य के साथ बाहर निकले थे कि वे अन्य देशों में ईसाई धर्म के साथ-साथ अपने साम्राज्य का विस्तार भी करेंगे।

स्थानीय लोगों का ईसाई धर्म में धर्मान्तरण करने के बारे में यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने, अधिकृत रूप से, तटस्थता की नीति अपनायी थी, तथापि ब्रिटिश-काल में तत्कालीन सैक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इण्डिया, लार्ड हैलीफेक्स ने यह वक्तव्य दिया था : "हर अतिरिक्त ईसाई भारत और ब्रिटेन के बीच की कड़ी को और ज्यादा मजबूत करता है, और साम्राज्य को भी अधिक सुदृढ़ करता है।" (एम. ई. श्रीयर : मिशनरी थिअरिज एण्ड प्रैक्टिसिस।')

पुर्तगाल 'सभ्य बनाओ' में लगे और विदेश जाने वाले हर पुर्तगाली का उद्देश्य रहता था **ईसाई धर्म के साथ-साथ पुर्तगाली साम्राज्य का विस्तार।**

1940 में पुर्तगाल सरकार और वेटिकन के बीच जो धर्मसन्धि हुई थी, और जिन समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे, उसे अमल में लाने के लिए 'Estatuto Missionaries' नाम से जो आज्ञप्ति जारी की गयी थी, उसमें खुले रूप में स्वीकार किया गया है कि "पुर्तगाली कैथोलिक मिशन साम्राज्योपयोगी कार्य है, जिसका सभ्यता-प्रसारक महत्व भी कम नहीं है।"

23 मार्च, 1975 के 'Estatuto Organico das Missies do Pardroado Protugues na India, में कहा गया है, "भारत में पुर्तगाली-संरक्षण प्राप्त कर धर्मान्तरण के कार्य को चालू रखने और विकसित करने के साथ पुर्तगाल नाम की प्रतिष्ठा को सुस्थिर करने और उसका प्रचार करने का है।"

इसी विचारधारा का अनुमोदन करते हुए, कार्डिनल कोस्टा न्युन्स ने, जब वे गोआ के पैट्रिआर्क (प्राधिधर्माध्यक्ष) थे, उन दिनों जब गोआ में देश-भक्ति की लहर व्याप्त थी, यह लिखने में कोई हिचकिचाहट नहीं दिखाई कि कैथोलिक मिशनरी का, जो वे स्वयं भी थे, यह कर्तव्य है कि वह पुर्तगाली औपनिवेशिक साम्राज्य की रक्षा करे, और गोआ और भारत के एकीकरण की निंदा करे। (गोआ के धर्माध्यक्ष और पादरियों को भेजे गए संख्या XLIX Bot Ecl. अक्तूबर, 1946 को भेजे गए पत्र में कहा गया है :' "सब उपनिवेशियों को, भले ही वे स्वयं अधार्मिक क्यों न हों, पूरा विश्वास है कि शासक और शासितों की आत्माओं को एक दूसरे के निकट लाने वाला माध्यम मानव धर्म ही है।" वे आगे कहते हैं, "साधारण भावना यही है कि विदेशों में फैले विशाल साम्राज्य को केवल सैनिक शक्ति से संभाले रहना असंभव है, और इसलिए शासित वर्ग

में सम्मिलित करना बहुत जरूरी है।

इस प्रकार, प्राधिधर्माध्यक्ष फ्रांस्टा न्यूस के अनुसार, धर्म का उपयोग करते हुए पुर्तगाली साम्राज्य को संभाले रहने के लिए आवश्यक था। उपरोक्त पत्र में, प्राधिधर्माध्यक्ष फ्रांस्टा न्यूस यह स्वीकार करते हैं कि पुर्तगाली राजाओं ने अपने सैनिकों और प्रचारकों के लिए "ईसाई बनाओ" वाला जो आदर्श-वाक्य निर्धारित किया था, वह राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही निर्धारित किया गया। कारण, "दूरस्थ देशों में इधर-उधर बिखरे लोगों पर शासन करना तब तक असंभव कार्य रहेगा, जब तक उन्हें ईसाई नहीं बना लिया जाता। (Our Method, J.C. N. Bol. Ecdt.)

यही कारण था कि शिक्षित हिन्दुओं ने सदा विदेशी मिशनरियों को या तो विदेशियों के जासूस समझा, या ऐसे व्यक्ति जो सदा अपने-अपने देशों के कल्याण और प्रभुत्व में ही रुचि रखते हैं। विदेशी तथा स्थानीय मिशनरियों का जासूसी तथा विनाशक कार्यों के लिए सी. आई. ए. के साथ गठबंधन सम्बन्धी हाल के लज्जाजनक उद्घाटनों से भारतीय जनता के, जो भारत में विदेशी मिशनरियों की उपस्थिति तथा कार्यवाहियों के कारण अत्याधिक चिंतित है, मन में उनकी छवि और अधिक कलंकित करती है, और वे इन मिशनरियों के कारण और अधिक उद्विग्न हो गए हैं।

भारतीय संस्कृति पर प्रहार

भारत में कार्यरत विदेशी मिशनरियों में से कुछ के घमण्डी रवैये और उनमें से कुछ के द्वारा की गई कपटपूर्ण और युक्तिपूर्ण स्वीकृतियों से यह सन्देह और अधिक पुख्ता हो जाता है कि इन लोगों का राष्ट्र-विरोधी संस्थाओं के साथ चोली-दामन का साथ है। ऐसे मिशनरियों में, विशेष रूप से उनका नाम लिया जा सकता है, जो प्रमुख पदों पर हैं, या भारतीय धर्माधिकारी वर्ग में परामर्शदाता या नेता के रूप में बादशाहों के 'बादशाह' की भूमिका निभा रहे हैं।

स्वतंत्र राज्यों की मांग करने वाले ये विदेशी मिशनरी

विदेशी मिशनरियों की, खास तौर पर ऐसे विदेशी मिशनरियों की, जो औपनिवेशिक आक्रमणों के बाद आये, धारणा थी कि जो कुछ उनकी संस्कृति के अनुरूप नहीं है, उसे नष्ट करके बदल देना चाहिए। ईसाईयत में ऐसे असंगत तत्वों के समावेश के कारण ही, ईसाई धर्म प्रचार आंदोलन आक्रमणशील और विनाशक बन गया।

और यही कारण है कि भारत के जिन-जिन भागों में पाश्चात्य रंग में रंगे मिशनरियों की संख्या अधिक है, जैसे सीमावर्ती या आदिवासी क्षेत्र, वहां-वहां राजनैतिक विद्रोह होते रहते हैं, और पृथक या स्वतन्त्र राज्यों की मांग उठती रहती है।

इसके अलावा, भारतीय ईसाईयों के ऐसे समुदाय, जो पाश्चात्य तौर-तरीकों से प्रभावित हैं, ऐसे विकृत रीति-रिवाजों के आप्लावित होने का खतरा है। ये हानिकर प्रभाव हमारे पारिवारिक जीवन के स्थायीत्व, बड़े-बूढ़ों के प्रति आदर-भाव, जीवन के गांभीर्य और हमारे लोकाचार एवं संस्कृति के स्थायी मूल्यों की अवहेलना कर रहे हैं, उन्हें नकार रहे हैं।

भारतीय ईसाईयत पर पाश्चात्य मिशनरियों की कार्यवाहियों के संघात का विश्लेषण करने के बाद ए. सोरेस नामक एक प्रमुख कैथोलिक ने, जो परमधर्माध्यक्षीय-प्रमुख (Papul knights) की उपाधि से विभूषित हो चुके हैं, लिखा था : "इस देश में हम अजनबियों की भांति व्यवहार करते हैं। हमारा व्यवहार औरों पर यही छाप छोड़ता है कि हमारा विराष्ट्रीकरण हो गया है, और इस विराष्ट्रीकरण के कारण हैं—ईसाई विदेशी धर्म और मिशनरी विदेशी धर्म प्रचारक।

भारतीय ईसाईयत का निरादर

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि भारत की ईसाईयत विश्व की प्राचीनतम ईसाईयतों में से एक है। इसका कारण यह है कि इसकी स्थापना ईसा के बारह पट्टशिष्यों में से एक ने की थी भारत आने वाला प्रत्येक यात्री हमारे देश के लोगों की गहरी श्रद्धा और धार्मिक समर्पण भावना का प्रशंसक रहा है। जहां तक धार्मिक प्रथाओं के पालन का प्रश्न है, हम विश्व के अनेक देशों के ईसाई समुदायों से आगे हैं। इसके अतिरिक्त भारत अपनी धार्मिक प्रवृत्तियों और सांस्कृतिक शोध की प्यास के लिए विख्यात है। ये अद्भुत तथ्य इस बात की साक्षी दे रहे हैं त्याग और प्रार्थनामय जीवन बिताने वाले हजारों संत और मनीषी, जिन्होंने इस धरती को पवित्र किया। ऐसी परिस्थितियों में, यह बड़ा अजीब लगता है कि भारतीय ईसाईयत को ऐसे विदेशी धर्म प्रचारकों पर निर्भर रहना पड़े, जो यहां मात्र अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए ही आते हैं। इसके विपरीत भारत इस स्थिति में है कि अपने धर्म-प्रचारक यूरोप और अमरीका, जहां ईसाई धर्म में लोगों की श्रद्धा दिन-ब-दिन कम होती जा रही है और उसमें धर्म-प्रचारक बनने का उत्साह नहीं है, भेज सके।

जब भारत राज-नीति, सुरक्षा, विज्ञान और औद्योगिकी आदि क्षेत्रों में, बिना विदेशी विशेषज्ञों की सहायता के, सफलतापूर्वक आत्म-निर्भर है, तो यह समझ में नहीं आता कि वह धर्म के क्षेत्र में भी क्यों नहीं आत्म-निर्भर हो यह समस्या यदि इस परिप्रेक्ष्य में देखी जाए कि भारत के लोगों में धार्मिकता और आध्यात्मिकता के प्रति सहज और अन्तर्जात झुकाव है, तो यह और अधिक महत्वपूर्ण बन जाती है। जब हम बौद्ध और जैन धर्मों का प्रसार विश्व के अगम्य भागों तक में कर सके, तो हम स्वयं अपने देश में ईसाई धर्म को अक्षुण्य क्यों नहीं रख सकते, उसका प्रसार क्यों नहीं कर सकते ?

तो जिस मुख्य समस्या की बाजी लगी हुई है, वह धार्मिक न होकर, परकीय लोगों के गूढ़ प्रेरक हेतुओं से सम्बन्धित है।

अतः यह बात अब काफी स्पष्ट हो गयी है कि देश में इतनी भारी संख्या में विदेशी मिशनरियों की उपस्थिति हमारी सुरक्षा के लिए एक बड़ा खतरा उत्पन्न करती है। उनकी उपस्थिति हमारे रीति-रिवाजों पर घातक

प्रभाव डालने के अतिरिक्त हमारी राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया में भी बाधक बनती है। इतना ही नहीं, भारत में इन विदेशी मिशनरियों की उपस्थिति उन भारतीय ईसाईयों के मुंह पर तमाचे से कम नहीं है, जिन्हें अपनी निष्ठा और गरिमा का तो बोध है ही, अपनी पैतृक उत्पत्ति का भी बोध है।

स्व० पं० नेहरू इस समस्या की गंभीरता से अवगत थे। देश में विदेशी मिशनरियों की उपस्थिति और कार्यवाहियों के बारे में पहले ब्रिटिश राज के अधिकारियों ने और बाद में राज्यसरकारों ने जो सख्त रुख अपनाया था, उनसे वे सहमत थे। एक ईसाई नेता को दी गयी भेंट में उन्होंने कहा था, "मुझे प्रतिदिन भारत के विभिन्न भागों में सैकड़ों ऐसे पत्र प्राप्त हो रहे हैं, जिनमें मिशनरियों के कार्यकलापों की शिकायतें की जाती हैं।···वे (मिशनरी) ये मानते हैं कि अब अंग्रेजों को मिशनरियों के तौर-तरीकों का पता था, तो उन्होंने आदिवासी क्षेत्रों में ईसाईयत के आगमन पर प्रतिबन्ध क्यों लगाया ? वे जानते थे कि इसमें आदिवासियों की अज्ञानता के अनुचित लाभ उठाये जाने का खतरा है। यदि यह खतरा ब्रिटिश राज में था, तो आज भी मौजूद है। फिर हम अंग्रेजों से ज्यादा अक्लमंद बनने की कोशिश क्यों करें, और इन मिशनरियों को बेचारे आदिवासियों का शोषण करने के लिए स्वतन्त्र क्यों छोड़ें ?

उपरोक्त बातों पर सोच-विचार करने के बाद हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि निम्न उपायों को अमल में लाना अत्यन्त महत्वपूर्ण है :

(1) विदेशी मिशनरियों के भारत आगमन पर प्रतिबंध लगना चाहिए। और उनके वीसाओं का नवीनीकरण समाप्त होना चाहिए।

(2) देश में विदेशी धन के अन्तर्वाह पर नियंत्रण लगाया जाये। यह धन विदेशी मिशनरियों से भी ज्यादा खतरनाक है।

(3) सीमावर्ती तथा वनवासी क्षेत्रों जैसे अ-सुरक्षित क्षेत्रों में मिशनरियों का प्रवेश निषिद्ध हो।

(4) भारत में विदेशी मिशनरियों की संख्या तथा उनके कार्यकलापों की जांच करने के लिए एक समिति नियुक्त की जाये।

(5) सरकार को चाहिए कि वह अविलम्ब उस बातचीत को आगे बढ़ाये, जो एक नए समझौते के बारे में वेटिकन चल रही है। इस प्रस्तावित समझौते के अनुसार बिशपों की नियुक्ति से पहले, सरकार की राय ली जाएगी यह जानने के लिए कि उसे प्रस्तावित उम्मीदवारों की नियुक्ति में राजनैतिक दृष्टि से तो कोई एतराज नहीं है।

आज भारतीय चर्च का जो ढांचा है, जिसमें विदेशी मिशनरी या उनके टहलुओं (चमचों) ने सभी महत्वपूर्ण और अनुकूल पदों पर अधिकार जमा रखा है, उसमें ये लोग अपने पदों की आड़ में अपने आपसी सहयोग को दृढ़ करते जा रहे हैं, और इसी आड़ के सहारे, राष्ट्रीय एकीकरण को बढ़ावा देने वाली शक्तियों को ही नहीं कुचल रहे है, बल्कि ईसाई धर्म का उपयोग विकसित देशों के लोगों का शोषण करने और अपने औपनिवेशिक तथा गिरजे सम्बन्धी आधिपत्य को स्थायी बनाये रखने के अपने प्रकट उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए भी कर रहे हैं।

जिन महत्वपूर्ण पदों पर इन विदेशी मिशनरियों ने कब्जा जमा रखा है, उनमें से कुछ हैं : दि नेशनल डायरेक्टर आफ पोन्टीफिकल मिशन्स पूना, दि डायरेक्टर आफ चर्च मास मीडिया हैदराबाद, एक ऐसे थियालाजिकल कालेज के रैक्टर और प्रोफेसर, जहां भावी ईसाई नेताओं को प्रशिक्षित किया जाता है, नई दिल्ली स्थित शक्तिशाली इंडियन सोशल इन्स्टीट्यूट, जो विदेशी धन के वितरण के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों की नियुक्तियां करती है।

यद्यपि धर्माधिकारी-वर्ग के भारतीयकरण की प्रक्रिया काफी समय से आरम्भ हो चुकी है, तथापि धर्मसंघ के कुछ बिशप और सुपीरियर, जो याजक-वर्ग (Clergy) और भिक्षु (Nuns) वर्ग में काफी संख्या में हैं, विदेशी ही हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि महत्वपूर्ण नीतियों का निर्धारण करने वाले अधिकांश पदों विदेशी मिशनरियों या उनके टहलुओं (चमचों) का ही नियंत्रण है।

(भारत कल्याण मंच, बम्बई)

(पृष्ठ 28 का शेष)

देवास में अभ्यास के वर्ग सम्पन्न

श्री महेशजी शर्मा ने किया।

द्वितीय दिन की अनेक विषयों पर सटीक चर्चा पश्चात अभ्यास वर्ग का समापन समारोह श्री दत्ताजी उननगांवकर के उद्बोधन से हुआ। दत्ताजी ने अपने भाषण में जीवन में निश्चित दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया तथा परिषद कार्यकर्ताओं से आह्वान किया कि सम्यक्ज्ञान, उच्च चरित्र एवं एकता के आधार पर संगठन को मजबूत करें उन्होंने आगे कहा कि व्यक्ति को समष्टि की ओर सदैव अग्रसर होना चाहिए। अभ्यासवर्ग का समापन कु० अश्विनी चेन्दुर्णीकर के वन्दे मातरम से हुआ।

द्विदिवसीय अभ्यासवर्ग इस प्रकार कार्यकर्ताओं की वैचारिक पृष्ठभूमि मजबूत करते हुए सम्पन्न हुआ। अभ्यासवर्ग के संयोजक श्री भगवानसिंह चावड़ा तथा कार्यक्रम व्यवस्था प्रमुख श्री मुकुन्द जी बले थे।

—कैलाश विजयवर्गीय

अ० भा० वि० प०

देवास में अभ्यास वर्ग सम्पन्न

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् का दो दिवसीय त्रिविभागीय (इन्दौर, भोपाल एवं उज्जैन) अभ्यासवर्ग 29 एवं 30 जुलाई को देवास में सम्पन्न हुआ। जिसमें अखिल-भारतीय परिषद के महामंत्री श्री महेशचन्द्र शर्मा प्रांतीय अध्यक्ष प्रो० दिवाकर नातू, प्रांतीय महामंत्री श्री मतीन अहमद शेख एवं प्रांतीय संगठन मंत्री श्री सालिगराम तोमर का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। अभ्यास वर्ग में तीनो विभाग के 17 स्थानों से 122 छात्र-छात्राओं ने भाग लिया।

29 जुलाई की प्रातः वेला में अभ्यास वर्ग का शुभारंभ मुख्य अतिथि पुरातत्ववेत्ता डॉ० वाकणकर ने किया। उन्होंने अपने उद्बोधन में छात्र शक्ति को रचनात्मक कार्यों के लिए एकजुट होने की अपील की साथ ही परिषद की ध्येयवादी भूमिका की प्रशंसा करते हुए डा० वाकणकरजी ने आगे कहा-ध्येय पथ पर चलने वाले प्रत्येक व्यक्ति, संगठन, समाज निश्चित रूप से सफल होंगे। अभ्यासवर्ग के शुभारंभ में सरस्वती वन्दना का गायन हुआ तथा अभ्यास-वर्ग की महता का प्रतिपादन एवं मुख्य अतिथि का परिचय शोध छात्र मुकुन्द वने ने दिया।

विद्यार्थी परिषद् के अखिल भारतीय महामंत्री, प्रान्तीय संगठन मंत्री, प्रान्तीय अध्यक्ष व मंत्री तथा अभ्यासवर्ग में आये अभ्यार्थी कार्यकर्ताओं ने अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर मंथना की। प्रान्तीय मंत्री श्री मतीन अहमद शेख ने "विद्यार्थी परिषद का इतिहास एवं विकास की दिशा" इस विषय पर अपनी सुमधुर वाणी एवं उत्कृष्ट शैली में अनेक मुद्दों की जानकारी रखी तथा परिषद की स्थापना से आज तक के उत्तरोत्तर कार्य वृद्धि पर प्रकाश डाला। द्वितीय सत्र में सालिगरामजी तोमर ने "सक्षम शाखा एवं विद्यार्थी परिषद की कार्य पद्धति" विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कार्यकर्ताओं में निस्वार्थ समर्पण की भावना होना आवश्यक बताया साथ ही उन्होंने स्पष्ट किया कि विद्यार्थी परिषद् पारिवारिक, गैर राजनीतिक सत्ता से दूर रचनात्मक दृष्टिकोण वाला छात्र संगठन है।

"ग्रामोत्थान हेतु छात्र अभियान" विषय पर प्रान्तीय उपाध्यक्ष एवं समाजशास्त्र के प्राध्यापक श्री मांगीलाल गुप्ता ने विस्तृत चर्चा की। चर्चा में उन्होंने कहा—ग्रामों के पुनर-निर्माण से राष्ट्रीय पुनर्निमाण संभव है इसलिए राजनीति, शिक्षा अर्थनीति, न्याय व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था यह सब ग्रामोन्मुखी हो।

उपरान्त बाद के सत्र में "वर्तमान स्थिति एवं अ०भा० विद्यार्थी परिषद्" पर मुं०पू० प्रान्तीय अध्यक्ष डा० वाकणकर ने अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त किया—वर्तमान स्थिति विस्फोटक है देश संक्रमणकाल से गुजर रहा है। तानाशाही, अनैतिकता, भ्रष्ट सत्ता-वादी ताकत मुंह फाड़े खड़ी है। छात्र शक्ति को रचनात्मक एवं संघर्षात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से इसे समूल नष्ट हेतु सदैव तत्पर रहना चाहिये।

अभ्यासवर्ग का विधिवत् उद्घाटन संध्या वेला में कार्यकर्त्रीयों के अपार हर्ष एवं करतल ध्वनि के मध्य सरस्वती एवं विवेकानन्द की प्रतिमा के समक्ष दीप प्रज्वलित कर मुख्य अतिथि म०प्र० विधान सभा के अध्यक्ष श्री मुकुन्द सखाराम नेवालकर ने किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता विक्रम विश्वविद्यालय के भाषा विकास अधिकारी डा० के०के० केमकर ने की। तत्पश्चात कार्यक्रम के मुख्य अतिथि अध्यक्ष एव कार्यकर्ताओं का स्वागत समिति के अध्यक्ष लायन्स श्री पटवर्धन ने किया। मुख्य अतिथि की आसंदी से संबोधित करते हुए श्री नेवालकर जी ने कहा कि परिस्थितियों का ज्ञान रखना ध्येय प्राप्ति का साधन है। वर्तमान राजनीति सामाजिक विकृति की जिम्मेदारा अपनी पीढ़ी पर लेते हुए वर्तमान पीढ़ी से आशा व्यक्त करते हुये निरन्तर रचनात्मक कार्य से पीड़ित, शोषित, अभावग्रस्त, उपेक्षित लोगों के उत्थान हेतु प्रयास करने को कहा। अध्यक्षीय भाषण में डा० केमकर ने "छात्र शक्ति" की इस स्थिति को देखकर दुःख प्रकट किया तथा राष्ट्रीय चारित्रिक ह्रास के लिए राजनीतिक लोगों को दोषी बताया। उन्होंने आगे कहा आजकल राजनीति में एक नयावाद उभर रहा है "शुद्ध राजनीति" (Pure Politics) जो कि पूर्ण-रूपेण झूठ, फरेब, कपट, अनैतिकता पर आधारित है। उद्घाटन समारोह में नगर के अनेक छात्र-छात्राए एवं गणमान्य नागरिक उपस्थित थे। कार्यक्रम की समाप्ति अशोक गायकवाड के आभार प्रदर्शन द्वारा हुई।

इस प्रकार अभ्यास वर्ग का प्रथम दिन अपनी सफलता की की चरम सीमा पर पहुंच सानन्द सम्पन्न हुआ। द्वितीय दिन का आकर्षण विशेष रूप से बढ़ गया क्योंकि अखिल भारतीय महामंत्री श्री महेशचन्द्रजी शर्मा एवं उद्योग संसदीय सचिव श्री बालूलालजी जैन मार्गदर्शन हेतु पधारे हुए थे।

द्वितीय दिन का प्रथम चर्चा सत्र "नयी शिक्षा नीति" विषय पर महामंत्री शर्माजी ने लिया। चर्चा के दरमियान मुदालीयर आयोग, राधाकृष्ण आयोग एवं कोठारी आयोग का तुलनात्मक विश्लेषण किया। 1968 में संसद में प्रस्तुत शिक्षा नीति एवं 30 अप्रैल 79 को संसद में प्रस्तुत शिक्षा नीति का भी तुलनात्मक प्रस्तुतीकरण किया। महामंत्री जी ने नयी शिक्षा नीति के अनेक पहलूओं का स्वागत किया तथा अनेक गंभीर मुद्दों पर चुप्पी साधने पर क्षोभ भी प्रकट किया। चर्चा में शिक्षा पर केन्द्रीय बजट का 10 प्रतिशत खर्च करने, शिक्षा को स्वायत्त करने आदि मांगों पर विशेष जोर दिया।

दोपहर में इन्दौर, उज्जैन एवं भोपाल विभाग की अलग-अलग बैठक सम्पन्न हुई जिसमें आगामी कार्यक्रम पर विचार विमर्श हुआ।

दोपहर बाद प्रश्नोत्तर सत्र हुआ। अनेक कार्यकर्ताओं के शंका का समाधान महामंत्री

(शेष पृष्ठ 27 पर)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति : कितनी सार्थक

स्वतंत्रता के पश्चात् ही भारतीय शिक्षा के आमूल चूल बदलाव की बात हर ओर से उठी, राष्ट्रीयपति से लेकर सामान्य व्यक्ति इस बात पर आम रूप से सहमत था और 30 वर्षों तक इस हेतु निरन्तर हर ओर से हल्ला होता रहा है। सरकार की ओर से इस हेतु अनेक प्रयास भी किये गये किन्तु वे केवल कुछ आयोगों तक ही सीमित होकर रह गये। 1977 में जनता पार्टी एक विशेष परिस्थिति में सत्ता में आयी।

किन्तु दो वर्षों में देश के शिक्षा मंत्रालय के कार्यकलापों में जिस प्रकार दिशा, संकल्प, और समझ बूझ कर अभाव दिखाई दिया उनसे शिक्षा क्षेत्र और समाज दोनों ही उद्वेलित थे। शिक्षा के ढाँचे के गणित (10+2+3 या 8+4+3) में सरकार फंसी रही। फिर भी जनता सरकार द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा का प्रयास निःसंदेह स्वागत योग्य है।

शिक्षा के संपूर्ण ढाँचे को भारतीय आवश्यकताओं एवं वास्तविकताओं के अनुरूप बनाने एवं स्वतंत्रता समानता एवं न्याय के मूलभूत राष्ट्रीय नीति के अनुरूप समयानुकूल तथा परिवर्तनशील शिक्षा नीति बनाने का संकल्प निःसंदेह महत्वाकांक्षी है।

प्राथमिक शिक्षा को वर्तमान दोषों से मुक्त कर उसे सर्वसुलभ करने एवं मानवीय शारीरिक एवं चारित्रिक रूप से व्यक्तित्व निर्माण के लिये उपयोगी बनाने हेतु विषय वस्तु में व्यापक परिवर्तन की बात को प्रथम बार राष्ट्रीय शिक्षा नीति में महत्व दिया गया है। सभी प्रवेश लेने वाले बच्चे अपनी शिक्षा पूरी करें इस बात का ध्यान भी इस को एक नया स्वरूप एवं महत्व प्रदान करता है। माध्यमिक शिक्षा में सामान्य विचार के माध्यम से दक्षता और स्वयं सीखने की आदत डालने तथा मात्र किताबी ज्ञान ही नहीं अपितु जीवन के क्षेत्र में एक विश्वास जागृत कराने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

कार्य अनुभवपरक एवं व्यावसायिक शिक्षा पर विशेष जोर वर्तमान शिक्षा प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण भाग है। इस हेतु मानवीय शक्ति के नियोजन द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति करने तथा इस स्तर पर कार्योन्मुखी एवं व्यावसायक उन्मुखी शिक्षा को आधार बनाने की महत्वपूर्ण योजना साहसिक कदम है। उच्च शिक्षा के प्रसार एवं प्रवेश की नीतियों को प्रतिबंधात्मक एवं चयनात्मक बनाकर शिक्षा क्षेत्र शिक्षा में बढ़ रहे अनुशासनहीनता एवं दिशाहीनता पर रोक लगाया जा सकना संभव हो पायेगा।

डिग्री और रोजगार का परस्पर संबंध विच्छेद कर देने से शिक्षा ज्ञानार्जन का साधन बन पायेगी। केवल मात्र रोजगार प्राप्ति के लिये उठापटक तथा दौड़धूप का स्थान सृजन कर रचनात्मकता प्राप्त कर पायेगी।

सुनील भार्गव

उच्च शिक्षा शोध और सृजन का केन्द्र बने तथा तकनीकी कृषि एवं सांस्कृति विकास के लिये प्रयत्नशील हो ऐसा विचारा राष्ट्रीय नीति शिक्षा नीति का नवीन पहलू हैं।

भारतीय भाषायों के विकास एवं शोध तथा त्रिभाषा फारमूले को लागू करने से संपूर्ण देश के ऐकात्मक चरित्र के विकास की श्रंखला और अधिक मजबूत बनायी जा सकेगी।

शिक्षकों को शिक्षा सुधार का केन्द्र शिक्षा नीति प्रारूप में माना गया है यह एक बड़ा क्रांतिकारी विचार है इसको विशेष महत्व दिये जाने की बात कही गयी हैं तो वास्तव में सभी ओर से स्वागत योग्य है। सेवारत अध्यापकों को शिक्षा सुधार के अनुरूप बनाया जा सके। इस हेतु अध्यापक प्रशिक्षण का प्रावधान भी रखा गया है, जो सराहनीय है।

शिक्षा पर और अधिक व्यय एवं वर्तमान साधनों के अधिकाधिक उत्पादक उपयोग की बात को दोहराया मात्र गया है। किन्तु समाज के साधनों एवं धन की सहायता को शिक्षा सुधार एवं विकास कार्यों में लगाये जाने को प्रोत्साहित करने की बात नवीन जान पड़ती है। यदि सच्चाई से इसे लागू किया जाय।

शिक्षा में चल रहे दोहरे मापदण्डो को पूरी तरह तोड़ने का साहस तो जनता सरकार नहीं कर पायी किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में पब्लिक स्कूलों को केवल समाज के अधिकार प्राप्त एवं सम्पन्न व्यक्तियों की पहुंच के दायरे से बाहर निकाल कर उसे आम आदमी को सुलभ कराने के प्रयास किये जाने की घोषणा तथा उनके वर्तमान वर्ग विभेदात्मक स्वरूप को समाप्त कर सामान्य स्कूल पद्धति से मिलाने का निश्चय साहसिक कदम जान पड़ते हैं?

किन्तु मात्र प्रारूप की घोषणा से शिक्षा में आमूल चूल परिवर्तन एवं सुधार की बात पूरी हो नहीं सकती। आवश्यकता इस बात की है कि संपूर्ण तन्त्र प्रभावशाली एवं गतिशीलता बने। गत वर्षों के केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के कार्यकलापों को ध्यान करें तो वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा शिक्षा नीति प्रारूप का क्रियांवयन सफलतापूर्वक हो जायेगा यह संदिग्ध है।

आज भी देश में शिक्षा का वही तंत्र काम कर रहा है जो देश में तीस वर्षों से भ्रष्टाचार और भाई भतीजावाद आदि दोषों से लिप्त रहा हैं। शिक्षा मंत्रालय इनमें कोई उपयोगी परिवर्तन कर पाने में पूर्णतया असफल सिद्ध हुआ हैं। शिक्षा जगत प्रतिदिन अनुशा मनहीनता और अनिश्चितता की ओर अग्रसर हो रहा है। शिक्षा जगत की तात्कालिक समस्यायें भी निरंतर बढ़ रही हैं।

यही नहीं वर्तमान प्रारूप को बनाने में जितना समय लगा उसके अनुरूप यह कोई नयी आशा जागृत करने वाला भी नहीं है। क्योंकि शिक्षा सुधार हेतु कोठारी आयोग के एक पक्ष यानि कैसी पद्धति को तो बेखूबी इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रारूप में समाविष्ट किया गया है किन्तु यह कैसे होगा इसकी योजना बनाने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप बदलाव की प्रक्रिया क्या होगी तथा इसमें कितना समय लगेगा इस ओर शायद सरकार का

ध्यान नहीं गया है। बिना कालबद्ध कार्यक्रम के नवीन शिक्षा नीति कितनी सार्थक और प्रभावी हो पायेगी यह बात शिक्षा नीति के क्रियान्वन की असफलताओं से हम भली भांति सोच सकते है। प्रक्रिया और समय में निर्धारण के अभाव में राष्ट्रीय शिक्षा नीति केवल मात्र सरकारी घोषणाओं और आश्वासनों की श्रृंखला में अपना स्थान बना कर रह जायेगी।

एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू शिक्षा के तंत्र के संबंध में उठता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियांवन को नौकरशाही और मात्र सरकारी प्रयासों के जिम्मे छोड़कर देने के शिक्षा परिवर्तन को गति के प्राप्त नहीं होगी। इस हेतु व्यापक स्तर पर जन सहयोग को निश्चित करना होगा तथा इस हेतु प्रत्येक स्तर पर आवश्यक तंत्र का गठन करना होगा। यह तंत्र संपूर्ण शैक्षणिक समुदाय (शिक्षक, शिक्षाविद्व एवं विद्यार्थी,) को युक्तसंगत एवं प्रभावी जिम्मेदारी देने वाला होना चाहिये। तथा दलगत राजनीति के प्रभाव से मुक्त स्वायत्त एवं लोकतांत्रिक हो ताकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सही मायने में उसकी मूल भावना के साथ क्रियांवित किया जा सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियांवन में किसी भी प्रकार का जोखिम उठाने का निर्णय सरकार को नहीं लेना चाहिये और इस हेतु जनसहयोग एवं संपूर्ण शैक्षणिक परिवार के सहयोग से युक्त स्वतंत्र स्वायत्त एक लोकतांत्रिक तंत्र की स्थापना छोटे से छोटे स्तर तक जाने चाहिए और इसकी शुरूआत केन्द्रीय स्तर से होनी चाहिये। उच्चाधिकार प्राप्त राष्ट्रीय शिक्षा पीठ की स्थापना केन्द्रीय एवं निचले स्तर तक की जानी चाहिये। संपूर्ण शिक्षा को प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक एवं एकात्मक विचार प्रत्येक स्तर पर समन्वय करके दे सके यह तंत्र ऐसा होना चाहिये। छात्र, शिक्षक एवं जनसमुदाय का सहभाग क्या होगा कितना होगा तथा कैसे होगा? आदि प्रश्नों को हल किये बिना राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपनी मूल भावना के अनुरूप किसी भी अवस्था में क्रियांवित नहीं हो सकती। और यदि आधे अधूरे प्रयास किये गये तो वर्तमान शिक्षा से भी अधिक विकृत एवं भयावह स्वरूप शिक्षा का हो जायेगा।

शिक्षा केन्द्रीय विषय रहेगा या राज्य का अथवा दोनों का, इस विषय में राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहीं भी कोई उल्लेख नहीं है। उत्तरदायित्व के निर्धारण के लिए बिना व्यापक परिवर्तन या सुधार का कल्पना करना, मूर्खों के रंगमहल में रहने के समान होगा। किस स्तर पर वहां कौन किस सीमा तक उत्तरदायी होगा? यह पहले ही निर्धारित कर लेना आवश्यक होगा। समझ में नहीं आता कि इतने महत्वपूर्ण विषय को शिक्षा नीति निर्माण के समय किस प्रकार ध्यान में नहीं रखा गया।

पब्लिक स्कूलों के वर्तमान स्वरूप को समाप्त करने के लिए किस प्रकार से क्या कदम उठाये जायेंगे इसके संबंध में कोई विशेष उल्लेख नीति में नहीं है। आधे अधूरे मन से इस संबंध में कोई मानो घोषणा करने की मजबूरी बन गयी हो। जैसा प्रतीत होता है। सरकार इस विषय में स्पष्ट नीति घोषित करने में असफल रही है। साथ ही अल्पसंख्यक वर्गों के स्कूलों के संबंध में घोषणा से सरकार के विचारों की अस्पष्टता एवं साहस की कमी स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। देश भर में शिक्षा एकसी एवं सर्वसुलभ होने की एक ओर तो घोषणा की गई दूसरी ओर विशेष सुविधा प्राप्त इस प्रकार के विद्यालयों को समाज में विभेदात्मक स्वरूप को जारी रखने का कार्य कर रहे हैं उनको विशेष दर्जा देने की बात गले नहीं उतरती। इस संबंध में जब तक कोई स्पष्ट एवं साहसिक कदम नहीं उठाया जाता तब तक राष्ट्रीय शिक्षा के प्रति सरकार की ईमानदारी के दावे खोखले और इन्द्र का मायाजाल ही साबित होते रहेंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का एक महत्वपूर्ण एवं अविच्छिन्न अंग राष्ट्रीय खेलकूद नीति होती है। वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस संबंध में कहीं कोई भी किसी भी प्रकार का जिक्र नहीं है। जब तक राष्ट्रीय खेलकूद की नीति राष्ट्रीय शिक्षा नीति के साथ-साथ विचार नहीं किया जायेगा शिक्षा के स्तर एवं प्रकार में कोई सुधार सार्थक होगा ऐसा सोचना अपने आप में अधूरा होगा। शिक्षा नीति के माध्यम से खेलकूद को विकास एवं खेलकूद के माध्यम से शिक्षा को सबल बनाने जैसे विषयों को एक ओर अनदेखा छोड़ राष्ट्रीय शिक्षा नीति की पूर्णता के बारे में विश्वास किया जाना संभव नहीं है

शिक्षा क्षेत्र में हर ओर बढ़ रही अनुशासनहीनता छात्र शिक्षकों एवं प्रशासन में दायित्व एवं कर्तव्यों के प्रति विमुखता का जो वातावरण आज हम देख रहे हैं उसके प्रति राष्ट्रीय शिक्षा नीति में एक शब्द भी नहीं कहा गया है। वर्तमान में देश की इस ज्वलंत समस्या को किस प्रकार सुलझाया जा सकेगा तथा इस स्थिति में सुधारों के प्रति विश्वास कैसे पैदा किया जायेगा इस संबंध में विचार नहीं किया गया। यदि सरकार ईमानदारी से शिक्षा में सार्थक परिवर्तन करना चाहती है तो इन विषयों पर विशेष ध्यान देना होगा अन्यथा यह अनुशासनहीनता एवं दायित्व बोध के अभाव में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का वास्तविक स्वरूप में क्रियांवन संभव नहीं हो पायेगा और यह दोष संपूर्ण शिक्षा को खा जायेगा।

शिक्षा की विषय वस्तु एवं तंत्र में परिवर्तन जहां आवश्यक है वहां पर प्रशासन को कुशल, सक्षम, स्वच्छ और दलगत राजनीति से दूर रखना उतना ही आवश्यक है। आज शिक्षण संस्थायें सरस्वती का "पावन" मंदिर न रहकर दलगत राजनीति का खुला अखाड़ा मात्र बन गयी है। इस पहलू पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कोई जोर नहीं दिया गया है। अतः परिवर्तन एवं सुधार की कल्पना अधूरी तथा मात्र घोषणा प्रतीत होता है।

शिक्षा नीति में वर्तमान साधनों के अधिकाधिक उत्पादक उपयोग की आवश्यकता की बात कही गई है जो प्रशंसनीय है किन्तु नवीन नहीं है। केवल मात्र उपलब्ध साधनों के उत्पादक उपयोग से काम चलने वाला नहीं है। बहुत बड़ी मात्रा में अतिरिक्त साधनों को जुटाने की आवश्यकता होगी अन्यथा साधनों के अभाव में कोरी कागजी कार्यवाही होकर रह जायेगी। वास्तविकता में कोई नीति लागू नहीं हो पायेगी।

अतः यह स्पष्ट है कि सरकार ने चिरप्रतिक्षित राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा तो की है किन्तु वह अपने आप में अपूर्ण तथा पूर्णतः सुविचारित नहीं है। शिक्षा नीति के एक पक्ष को तो अच्छे ढंग से रखा गया है किन्तु इसका क्रियान्वयन 'कैसे हो' तथा वर्तमान में चल रही विकृतियों का समाधान कैसे हो इस विषय को एकदम उड़ा दिया है।

यदि सरकार वास्तव में शिक्षा के प्रति अपनी ईमानदारी सिद्ध करना चाहती है और शिक्षा जगत तथा समाज में इसके प्रति कोई नयी आशा का संचार करना चाहती है तो उसे शीघ्र इस अपूर्णता तथा एक पक्षीयता के दोष से राष्ट्रीय शिक्षा नीति को मुक्त करने हेतु कारगर कदम उठाने चाहिये अन्यथा वर्तमान शिक्षा नीति भी आज तक हुए परिवर्तनों के प्रयासों के इतिहास की मात्र पुनरावृति बन कर रह जायेगी। वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप शिक्षा क्षेत्र और समाज में कोई नई आशा तथा विश्वास जगा पाने में पूर्णतया असफल रहा है।

—o—

जनता प्रशासन के दो वर्ष

चहुमुखी विकास की दिशा में निश्चित कदम
हरिजनों और कमजोर वर्गों पर सबसे अधिक ध्यान

- ☐ पुनर्वास बस्तियों, शहरीकृत गांवों, अनधिकृत बस्तियों, कटरों तथा यमुना पार की 55% से भी अधिक आबादी को पहली बार जीवन की बुनियादी सुविधायें देना।
- ☐ हरिजन तथा पिछड़े वर्ग के कल्याण पर खर्च 1976-77 के 43 लाख रुपये से बढ़कर 104 लाख रुपये और पहली बार 37 हरिजनों को बसें खरीदने के लिए आर्थिक सहायता और बस का मालिक बनाना।
- ☐ 4465 मजदूरों को किराया-खरीद पर मकान देना।
- ☐ गांवों के विकास पर 26 करोड़ रुपये खर्च। एक वर्ष में हर गांव में पीने का पानी देने के लिए 11 करोड़ रुपये की योजना। पिछले 30 वर्षों में 25 गांवों को यह सुविधा मिल सकी। इसी प्रकार पहली बार गांवों का लाल डोरा बढ़ाया गया।
- ☐ दो लाख लोगों को काम में लगाने के लिए कई लघु उद्योगपुरियों की स्थापना। जिन घरों में कोई भी काम पर नहीं है उनमें कम से कम एक को काम देने की क्रांतिकारी योजना।
- ☐ दूर-दराज की कालोनियों और देहातों में द्वार पर चिकित्सा सुविधा की योजना के अन्तर्गत 500 बिस्तरों के 2 तथा 100-100 बिस्तरों वाले 7 अस्पतालों की स्थापना की योजना।
- ☐ ढाई लाख बच्चों को पोषक और मध्याहार। 72000 बच्चों को छात्रवृत्ति। हर गरीब बच्चे को मुफ्त वर्दी और किताबें। 16500 युवक युवतियों को 16 संस्थानों में रोजगार की शिक्षा। केवल पात्रता के आधार पर प्रवेश। 100-100 आंगन-बाड़ियों की सात योजनाओं के अन्तर्गत एक लाख बच्चों व माताओं को शिक्षा, पोषण तथा चिकित्सा सुविधाएं।
- ☐ पहली बार दिल्ली में एक वर्ष में 11000 मकान बने और इस वर्ष 20000 मकानों व 22000 सेवा एवं झुग्गियों के निर्माण की योजना। 80 प्रतिशत मकान अल्पआय व आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए।
- ☐ 5 वर्ष में 7.5 लाख वयस्कों को साक्षर बनाने की योजना।
- ☐ पूर्ण नशाबन्दी 31 मार्च 1980 तक।

आइये हम सब अपने देश की राजधानी को विश्व की सुन्दर और,
सुविधा संपन्न राजधानियों में से एक बनाने के लिए संकल्प लें।

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन द्वारा प्रसारित

Regd. D (D) 754
R. N. 32464/78

Be it any ground—
Feroz Shah Kotla, Eaden Gardens, M. A. Chidambaram Stadium, The Old Brabourne Stadium, or The New Wankhede Stadium, Azad Maidan, Cross Maidan or even any road or 'gully' of Bombay, and let there be any pitch conditions or bowling spells——hostile pace, fierce bouncers, treacherous gugglies or the tricky spin, I, with my team of seasoned experts always thrill patrons by scoring fast and accurate deliveries. Any doubt? Come and play with me or check with my patrons . . . Miaon ! . . .

prakash roadlines (P.) ltd.

Regd. Office:
8/9, Kalasipalayam,
New Extension, Bangalore-2.
Phone : 609026–609076
Telex : 0845/329

Delhi Office
1539, Church Road,
Kashmere Gate, Delhi-6.
Phone : 221561–221562
Telex : 031-2421

संपादक, प्रकाशक, : अरुण जेटली, नारायण विहार, नई दिल्ली-110028 से प्रकाशित एवं गुप्ता प्रिंटर्स 113, छत्ता भवानी शंकर, फतेहपुरी, दिल्ली-6 Phones [Darya Ganj Fateh Puri] से मुद्रित ।